आनन्द संस्थान-६

जिनेन्द्र महावीर

[आधुनिक जीवन-संदर्भ में]

लेखक :-

डॉ० निज़ामउद्दीन

एम० ए०, पी-एच०डी०

अध्यक्ष

हिन्दी विभाग

इस्लामिया-कालिज, श्रीनगर (काश्मीर) १९००१

भगवान महावीर के २५००वाँ निर्वाण उत्सव के उपलक्ष में प्रकाशित

-: समर्पण :-

ज्ञान और स्नेह की साकार प्रतिमा

युगपुरुष उपाध्याय विद्यानन्द मुनि जी

जो मुनि के कठोर व्रतों का अनुपालन करते

हुए धर्म के मूलतत्वों को जीवन में प्रतिष्ठित

कर मानवता की अविरल सेवा में अभिरत हैं

को सादर-

—निज़ाम उद्दीन

विषयानुक्रम

गवर्नर,
उत्तर प्रदेश

गवर्नर्स केम्प,
उ०प्र०

जैन धर्म की शाश्वत उपयोगिता

आज हमारे जीवन मूल्यों का जिस शीघ्रता से विघटन और ह्रास हो रहा है जिसके परिणाम स्वरूप जन-जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में जो रिक्तता आई है उसकी पूर्ति की दिशा में हमारी सांस्कृतिक धरोहर से ही हमारे राष्ट्र को ऊर्जा प्राप्त हो सकती है, इसमें सन्देह नहीं। इस पुस्तिका में, भगवान महावीर के जीवन वृतान्त, उनके दर्शन तथा आधुनिक परिप्रेक्ष्य में उसकी उपयोगिता का समावेश करते हुये, लेखक ने 'गागर में सागर' भरने का जो प्रयास किया है वह नितान्त प्रशंसनीय है। अनेकान्तवाद, सामाजिक एकता, नारी जागरण आदि महावीर जी के दार्शनिक तत्वों को सरल भाषा में प्रकाश में लाकर लेखक ने जैन धर्म की शाश्वत उपयोगिता को सिद्ध कर दिया है। हिन्दी भाषा का साधिकार प्रयोग भी प्रशंसनीय है।

अपने सांस्कृतिक मूल्यों के संरक्षण तथा संवर्धन की दिशा में 'आनन्द संस्थान' का यह प्रयास राष्ट्रीय गौरव तथा भावात्मक एकता के विकास में सहायक होगा, ऐसा मुझे विश्वास है।

मैं इस प्रकाशन की लोकप्रियता हेतु अपनी हार्दिक शुभकामनायें देता हूं।

च० चेन्ना रेड्डी

प्रकाशकीय

राष्ट्र एवं समाज की सेवा, शैक्षिणिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक, रचनात्मक तथा आध्यात्मिक कार्यों तथा आयोजनों द्वारा समाज में फैली विषमता, असमानता और रूढ़वादिता को दूर कर विकृत मानव मन को प्रेम के व्यवहार में बांधा जा सके, इसी उद्देश्य का भाव लिए आनन्द-संस्थान जन कल्याण के लिए तत्पर है।

वर्तमान आर्थिक एवं सामाजिक अव्यवस्था का कारण धर्म का अभाव है। आज व्यक्ति मानव धर्म से विमुख होकर झूठी लोलुपता, झूठे सांसारिक सुख भोगों की ओर बढ़ रहा है। जिसके लिए वह जघन्य अपराध, घोर-हिंसा, भ्रष्टाचार से भी नहीं घबराता।

तो आइए हम एक ऐसे समाज की नींव रखें जो मानव कल्याण की भावना लेकर राष्ट्र को सबल मार्ग दर्शन दे। जिसके लिए आवश्यक है धार्मिक एवं सामाजिक संस्थाओं का योगदान। क्योंकि धर्म के अभाव में ही हमारा नैतिक स्तर गिर रहा है। जबकि धर्म का विकास ही मानव का विकास है। सभी धर्म एवं जाति के लोगों का एक ही मार्ग है। आजकी आर्थिक और सामाजिक स्थिति के लिए आवश्यक है हम अपनी आवश्यकतानुसार ही एकत्र करें, अधिक नहीं। हमें अपरिग्रह अहिंसा अनेकान्त और संयम का सहारा होना चाहिए।

और आज भगवान महावीर २५००वां निर्वाण उत्सव वर्ष में डा० निजाम साहब की यह कृति 'जिनेन्द्र महावीर' आधुनिक जीवन सन्दर्भ में यही बतलाती है कि धर्म के मर्म को समझो। [illegible] की भावना को दूर कर मानव कल्याण की भावना [illegible] जाति-पांति, ऊंच-नीच, मत-मतान्तर और रूढ़िवाद [illegible]। को दूर कर परस्पर प्रेम एवं सहृदयता का भाव लिए [illegible] साहब ने व्यापक दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुये इस कृति को लेखबद्ध किया है। निजाम साहब का यह प्रयास अत्यन्त सराहनीय है।

आज आनन्द संस्थान का यह छठा पुष्प प्रस्तुत करते हुये मुझे बड़ी प्रसन्नता हो रही है। इस अवसर पर मुझे आन्ध्र प्रदेश के राज्यपाल अध्यात्म प्रणेता महामहिम डा० एस० चन्नारेड्डी की वह पावन स्मृति याद आ रही है जो उन्होंने १३ फरवरी १९७५ को आनन्द संस्थान में पधार कर मार्ग दर्शन, प्रेरणा सन्देश द्वारा हमें बल दिया था। हम उनकी रुचि एवं मार्ग दर्शन के अत्यन्त आभारी हैं।

रमेश कुमार जैन

शुभाशंसन

भगवान महावीर निर्वाण रजत शती महोत्सव के शुभावसर पर इस प्रकार के साहित्य विपुल मात्रा में प्रकाशित हो रहे हैं। यह हर्ष की बात है भगवान महावीर व महावीर तत्व ज्ञान समस्त विश्व में प्रसारित होगा। जितने व्यापक प्रमाण में उतने ही अधिक विश्व शांति जगत में फैलेगी। 'शिखर सेवा सदन' से पुरस्कृत मनीषी डा० निजामउद्दीन ने महावीर धर्म का सूक्ष्म अवलोकन कर यह लघुकाय पुस्तिका लिपिबद्ध की है। 'आनंद संस्थान' ने बहुत आनंद से उसका प्रकाशन किया है, दोनों उपक्रम प्रशंसनीय है इस शुभ कार्य के साथ हमारा शुभाशीर्वाद है।

(उपाध्याय विद्यानन्द मुनि)

दशलक्षण पर्व
जैन नगर
जगाधरी (हरियाणा)
वीर निर्वाण सम्वत् २५०१
(सितम्बर १९७५)

अपनी बात

भगवान महावीर के २५०० वें परिनिर्वाण के महोत्सव गतवर्ष से देश के कोने-कोने में हर्षोन्माहपूर्वक समायोजित किये जा रहे हैं। हम सभी को अपना परम सौभाग्य समझना चाहिये कि यह परमपावन पर्व हमारे जीवन-काल में आया है। परिनिर्वाण महोत्सव से एक वैचारिक क्रान्ति का सूत्रपात होगा, इससे हम दूसरों के प्रति सहिष्णु सहानुभूतिशील और सदाशयी बन सकते हैं। जातिवाद और रंगभेद की, परिग्रह की दुर्भावनाओं का मंथन कर संस्कृति का नवनीत-अहिंसा प्राप्त कर सकते हैं।

कैसी विडम्बना है! शताब्दियों से हिन्दू-मुसलमान आदि इस धर्मपरायण देश की धरती पर साथ-साथ रह रहे हैं, लेकिन कितने पराये-से, कितने अजनबी-से बनकर; क्योंकि एक दूसरे के धर्माचार से, सांस्कृतिक परम्परा से अनभिज्ञ हैं। यह अनभिज्ञता ही तो इस देश में साम्प्रदायिकता का विष-वमन करती है। काश! हम एक-दूसरे के धर्म, संस्कृति को अपनत्व की भावना से, गहराई से जान सकते। एक-दूसरे के धर्म को, संस्कृति को, साहित्य को जानने से उद्‌भावना का उद्रेक होता है, भाईचारा बढ़ता है, सामाजिक एकता, जातीय एकता तथा भावात्मक एकता की गंगा-जमना प्रवाहित होती है। आज राष्ट्रीय एकता को मजबूत बनाने के लिये इन्हीं बातों की बेहद जरूरत है। यह पुस्तक भावात्मक एकता की दिशा में एक संगे मील का काम करेगी, ऐसी आशा है।

संयोग कहिए या मेरा सौभाग्य कि दिसम्बर १९७३ को मेरठ में श्रद्धेय मुनि श्री विद्यानन्द जी (सम्प्रति उपाध्याय जी) का दर्शन-लाभ प्राप्त हुआ था। उन्हीं के सौजन्य से, स्नेहाप्यायित व्यवहार तथा आशीर्वाद से तीर्थंकर महावीर के जीवन को, उनके उपदेशों को जानने का अवसर मिला। कौन जाने इस पुस्तक की रचना में भी उनकी प्रेरणा एवं शुभाशीष प्रच्छन्न हों!

श्री रमेश कुमार जैन, रामपुर जो एक कर्मठ और उत्साही युवक है, के प्रति आभार प्रकट करना अपना कर्तव्य समझता हूँ जिन्होंने न केवल मुझ से पुस्तक लिखाकर ही छोड़ी वरन् उसके प्रकाशन में पूर्ण रुचि और तत्परता प्रदर्शित कर पुस्तक को साकार रूप दिया।

अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
इस्लामिया कालेज, श्रीनगर (कश्मीर)

—निजाम उद्दीन

अभिवचन

धर्म का पालन कर मनुष्य ही आत्मा से परमात्मा, नर से नारायण बन सकता है। भगवान महावीर ने मानव जीवन को दुर्लभ बताया है, मानव के पास अनन्त शक्ति और ज्ञान मौजूद है वह अपने पराक्रम व पुरुषार्थ से उच्चपद पा सकता है।

बुद्धि प्रकृति की एक अति सूक्ष्म परिस्थिति है और इसके विकास से ही ज्ञान का विकास होता है। इस विकास के लिए शिक्षा तथा शिक्षण सामिग्री का सहारा लेना पड़ता है। आध्यात्मिक वचन व लेखनी ही से ज्ञान सही रूप से विकसित होता है। उसके लिए उच्च स्तर की पाठ्य सामिग्री का चयन आवश्यक है। डॉक्टर निज़ामउद्दीन की यह पुस्तक उसी उच्च कोटि में मुख्य स्थान रखती है। यह पुस्तक कम से कम शब्दों में अधिक से अधिक विषय की जानकारी देने में सक्षम है। अब यह पाठकों पर निर्भर है कि वह इस पुस्तक से कितना लाभ उठाते हैं।

इस पुस्तक की शैली भी सशक्त है। यह पुस्तक जैन धर्म के अनुयाईयों तथा जैनेत्तर बन्धुओं के लिए ज्ञानवर्धक तथा मार्ग-दर्शक साबित होगी। लेखक ने महावीर की बुद्ध, मोहम्मद तथा राम से तुलना करके इस पुस्तक को व्यापकता प्रदान की है।

डा० निज़ामउद्दीन इस पुस्तक के लिए अत्यन्त ब...

इस प्रकार की पुस्तकों के प्रकाशन का कार्य इस ब... है कि 'आनन्द-संस्थान', अध्यात्म, शिक्षा तथा सेवा के ... एक रचनात्मक लक्ष्य अपनाए हुए है। हर्ष का विषय है कि भगवान महावीर की २५ वीं शताब्दी समारोह के अवसर पर यह प्रकाशन संस्थान द्वारा प्रस्तुत हो रहा है। मेरी कामना है कि यह संस्थान दिनों दिन ठोस प्रगति करता रहे।

विमल चन्द्र जैन
एडवोकेट
डी० जी० सी० (फौजदारी) रामपुर

बाबू आनन्द कुमार जैन

निधन- १९ नवम्बर १९६८

बाबू आनन्द कुमार जैन संस्थान रामपुर

महावीर

(आधुनिक जीवन सन्दर्भ में)

विश्व के धार्मिक मानचित्र पर उसमें आदर्श मानव या महापुरुष की परिकल्पना की जाती रही है जिसमें आत्मा की सर्वोपरिता, समुत्कृष्टता विद्यमान है तथा भौतिक तत्वों की अपेक्षा आत्मतत्वो की श्रेष्ठता प्रतिष्ठित है। ईसा से कई शताब्दियों पूर्व विश्व का चितनाकाश ऐसी महान विभूतियों से समाच्छादित रहा है जिन्होंने आत्मतत्त्व पर अत्यधिक ध्यान केन्द्रित किया। ईरान में जरतुश्त, चीन में लाओत्से और कन्फ्यूशस, यूनान में पीथागोरस सुकरात, अफलातून, जूडिया में पैगम्बरों की सुदीर्घ परम्परा और भारतवर्ष में उपनिषदों के महर्षि गौतमबुद्ध, महावीर प्रभृति तपपूत महात्माओं का दिव्य ध्यान आत्मतत्वों पर ही केन्द्रित रहा। भगवान महावीर उन दिव्यात्माओं में जाज्वल्यमान हैं जिन्होंने आत्मा को जीता, इसी कारण तो वह 'जिन' कहलाये और उनके अनुयायी 'जैन' कहलाते हैं। वीतराग-परमेष्ठी, अर्हच्चरणारविन्द जिनेन्द्र महावीर ने सकल संसार को आत्मवत् समझकर मा हणो' को शंखनिनाद कर अहिंसा के जिस विराट, सर्व्यापक स्वरूप का प्रतिपादन किया उसका परम कल्याणमय अनुरणन अद्यावधि हमें दिग्दिगंत में श्रवणगोचर होता है। २०वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में महात्मा गांधी ने जिस अहिंसा और प्रेम का सम्बल प्राप्त कर दुर्जेय शत्रु पर आशातीत विजय प्राप्त कर स्वतंत्रता का वरण किया था वह महावीर के अहिंसा और प्रेम का ही तो प्रतिरूप था। अनादि काल से भारत की शस्य-श्यामला धरती ऐसी दिव्यात्माओं की मोहक सुगंध से सुरभित है। सम्पूर्ण वायुमण्डल उनकी पावन वाणी से अनुगुंजित है। यह हमारा परम सौभाग्य है कि हमने ऐसे महान देश में जन्म लिया है।

महानात्माओं का प्रादुर्भाव साभिप्राय होता है। भगवान महावीर का जन्म ऐसे समय में हुआ जब समाज विषमताओं की विभीषिका में अभिग्रस्त था। समाज में मनुष्य का मनुष्य के रूप में समादर घटता जा रहा था। दास-दासी के रूप में नर-नारी का क्रय-विक्रय होता था। नारी को पिता-पति की सम्पत्ति के अधिकार से वंचित रखा जाता था,

उस समय विधवा-विवाह की प्रथा भी नहीं थी। चंदना नाम की सुन्दरी का खुले बाजार में बेचा जाना उस समय की प्रचलित प्रथा का ज्वलंत प्रमाण है। बहुधा स्त्रियों को धार्मिक क्रियाओं में भी भाग लेने का अधिकार नहीं था। यही नहीं निरीह पशुओं का यज्ञ में बलिदान भी अधिक मात्रा में किया जाता था। धर्म-गुरु पुरोहित सभी रक्त-मांस के लोलुप स्वार्थसिद्धि के हेतु जनता को पथभ्रष्ट कर रहे थे समाज की ऐसी दारुण, करुण, विपन्नावस्था के कारण भगवान महावीर आविर्भूत हुए।

जन्म: आज से लगभग २५०० वर्ष पूर्व भारत में वैशाली (पटना से ३० मील उत्तर में) नाम का एक समृद्ध गणतंत्र था। उसके अधिपति चेटक थे। उनकी एक परम गुणवंत और अनिद्यसुन्दरी पुत्री थी त्रिशला। त्रिशला का विवाह कुण्डपुर या कुण्डलपुर के ज्ञातृवंशी क्षत्रिय राजा सिद्धार्थ से हुआ था। सर्वगुणसम्पन्न सम्राज्ञी त्रिशला को राजा सिद्धार्थ प्रियकारिणी कहते थे। एक बार आषाढ़ शु० ६ की रात्रि थी और उत्तर-हस्त नक्षत्र था (तदनुसार १७ जून ५९८ ई०पू०)। उसी रात्रि में रानी त्रिशला ने सुखद नींद में १६ दिव्य स्वप्न देखे; जिसमें हाथी, बैल, सिंह, लक्ष्मी, सुगंधित पुष्प-माला, पूर्णचन्द्र, सूर्य, दो मीन, जल-पूर्ण स्वर्ण कलश, सरोवर, लहराता सागर, सिंहासन, देव-विमान, रत्नराशि नागभवन और निर्धूमाग्नि को देखा। रानी ने इन दिव्यस्वप्नों का फल जब राजा सिद्धार्थ से पूछा तो बुद्धिमान राजा ने अपने ज्ञान से इन का फल इस प्रकार बताया (१) हाथी देखने से सौभाग्यशाली पुत्र की माता बनने वाली हो, [illegible] वह धर्म रूपी रथ का चलाने वाला होगा, (३) [illegible] है अपार बलशाली होगा, (४) लक्ष्मी देखने से मोक्ष रूप[illegible] प्राप्त करने वाला होगा, (५) सुगंधित पुष्पमाला देखने से वह यशस्वी होगा उसकी यश-गंध सर्वत्र प्रसरित होगा, (६) पूर्ण चन्द्र देखने से वह मोहान्धकार का नाशक बनेगा, (७) सूर्य देखने से वह ज्ञानालोक फैलायेगा, (८) जलपूर्ण कलश के देखने से वह प्राणियों को सुख-शांति प्रदान करेगा, (९) दो मीन देखने से वह सुखगामी होगा (१०) सरोवर देखने से वह सम्पूर्ण लक्षणों वाला होगा, (११) लहराता सागर देखने से वह सागर-तुल्य शांत एवं गम्भीर होगा, (१२) सिंहासन देखने से वह तीनों लोकों का अधिपति होगा, (१३) देव-विमान देखने

से वह स्वर्ग से तुम्हारे गर्भ में आया है, (१४) रत्न-राशि देखने से वह श्रेष्ठ गुणों का स्वामी होगा, (१५) नाग भवन से वह मुख्य तीर्थंकर होगा', (१६) निर्धूमाग्नि देखने से वह तप रूपी अग्नि से कर्म रूपी ईंधन को भस्म करने वाला बनेगा। तब नौ मास, सात दिन के पश्चात् चैत्र शुक्ला त्रयोदशी को अर्यमा योग में तदनुसार सोमवार, २७ मार्च ५९९ ई० पू० रानी त्रिशला की कोख से अनुपम तेजवन पुत्र का प्रसव हुआ। नारकीय यंत्रणाओं से संपीडित प्राणियों ने सुख-चैन की सांस ली। 'कुण्डलपुर' में हर्षोल्लास के साथ नवजात राजकुमार का जन्मोत्सव मनाया गया। पूज्यपाद की 'निर्वाणभक्ति' में वर्द्धमान के जन्म का उल्लेख इस पंक्ति में है: -

"सिद्धार्थनृपतितनयो भारतवास्ये विदेहकुण्डपुरे"

जन्मजात अवधिज्ञानी भगवान महावीर का शरीर अत्यन्त सुन्दर था, गुणधाम था। मधुवेष्टितत्राणी, अतुलित बलवान महावीर के शरीर में शंख, चक्र, कमल, यव, धनुष आदि १००८ शुभ लक्षण थे। आठ वर्ष की अल्पायु में ही उन्होंने हिंसा, असत्य, चोरी, कुशील और परिग्रह का पूर्णत: परित्याग कर दिया। जब उन्हें कलाचार्य के यहाँ शिक्षार्थ भेजा गया तो इन्द्र मनुष्य के छद्मवेश में कलाचार्य के समक्ष उपस्थित हुए, महावीर ने इनके सभी प्रश्नों का समीचीन उत्तर देकर वृद्ध (इन्द्र) की शंकाओं का सम्यक समाधान किया जिससे कलाचार्य भी आश्चर्यान्वित रह गये। इन्द्र ने आचार्य को बतलाया कि यह बालक अप्रतिम मेधाशील है, परम ज्ञान-सम्पन्न है। इसे साधारण विषयों का ज्ञान देना अवांछनीय है। वह बाल्यावस्था से ही निर्भीक, उत्कृष्ट और ओजस्वी थे। उनकी निर्भीकता और परोपकार की चर्चा इन्द्रलोक में भी होती थी।

महावीर के पांच नाम: - नवजात शिशु का नाम 'वर्धमान' रखा गया क्योंकि जन्म से राजा सिद्धार्थ का वैभव, यश, प्रताप, पराक्रम वृद्धि पाने लगा। उनका यह नाम भी अतिलोकप्रिय है।

उनका दूसरा नाम 'सन्मति' रखा गया। कुमार वर्द्धमान अति मेधावी थे। एक बार संजय और विजय नामक दो ऋद्धिधारक मुनि जब महावीर के पास अपनी कतिपय तत्व-विषयक शंकाओं का समाधान प्राप्त करने आये तो दूर से ही-वर्द्धमान के दर्शन मात्र से ही

उनकी सभी मानसिक शंकाओं का स्वयमेव निरसन हो गया। अपनी शका निरसन से मुनिद्वय अति प्रसन्न हुए और उन्होने इस मेधाशील बालक का नाम 'सन्मति' रखा।

वर्धमान का तीसरा नाम 'वीर' है। एक बार जब कुण्डलपुर की गजशाला से एक मदोन्मत्त गज स्त्री-पुरुष को कुचलता, वस्तुओं को अस्त-व्यस्त करता भाग निकला तो सभी भयभीत हो गये; एक कोहराम मच गया। क्रीडारत बालक इधर उधर भागने लगे। उस समय वर्द्धमान ने निर्भय वाणी में जब सिंहगर्जन किया तो हाथी सहम कर खड़ा हो गया। वर्द्धमान ने उस पर चढ़कर वज्रमुष्टियों से ऐसे कठोर प्रहार किये कि वह निर्मद हो गया। उनकी इस निर्भयता और वीरता को देखकर लोगों ने उन्हें 'वीर' का अभिधान दिया।

राजकुमार वर्द्धमान एक दिन अपने संगी-साथियों के साथ आमली क्रीड़ा में अभिरत थे तो संगम नामक देव परीक्षार्थ सर्प के रूप में वृक्ष से लिपट कर फुंकारने लगा। भयानक विषधर के डर से अन्य सभी बालक भाग गये लेकिन वर्द्धमान ने निर्भय होकर उसे दूर कर दिया। उनकी इस वीरता और साहस से देव भी प्रसन्न हुए और उनका नाम 'महावीर' रखा।

यौवनवस्था में दुर्द्धर्ष अनंगदेव पर विजय प्राप्त कर वह कामजयी हुए. इस पर लोगों ने उन्हें 'अतिवीर' के नाम से बो[illegible] [illegible]नके इन नामों में 'वर्द्धमान' और 'महावीर' ये दो ही [illegible] [illegible]प्रिय हैं।

राज्य से विरक्ति :— शुक्ल पक्ष के शशि-सदृश अहर्निश बढ़ने वाले राजकुमार जब किशोरावस्था को पार कर यौवनावस्था को प्राप्त हुए तो मातृ-पिता ने कलिंग नरेश की अप्रतिम सुन्दर राजकुमारी यशोधा के साथ उनके विवाह का प्रस्ताव उनके सामने रखा जिसे उन्होंने यह कहकर अस्वीकृत किया कि 'मैं संसार के बन्धों में क्यों बंधूं मैं तो संसार का कल्याण करने आया हूँ।'' उनके इस कल्याणमय प्रण को सुनकर मातृ-पिता ने फिर ऐसा प्रस्ताव नहीं रखा और वह पूर्णतः कामजयी 'अतिवीर' रहे, जीवन-पर्यन्त अविवाहित ही रहे। परन्तु इस मान्यता के विपरीत श्वेताम्बर परम्परानुयायी (सम्भवतः बौद्धों से

प्रभावित होकर। उनका विवाह यशोधा के साथ होना मानते हैं और 'प्रियदर्शना' नामक पुत्री के जन्म को भी स्वीकार करते हैं। अत उनके विवाह का प्रसग अभी तक विवादास्पद है। सर्व-सुख-सुविधा-सम्पन्न होने पर भी- राजसी वातावरण में रहने पर भी- महावीर का बुद्धि-वैभव और चिन्तन-शक्ति व्यापक से व्यापक और गहन से गहन होने लगी। यदाकदा पर्यटनादि के अवसर पर जब उनकी दृष्टि समाज पर पड़ती तो वह सामाजिक विषमता तथा विद्रूपता को देखकर चिंताकुल हो उटते। धर्मान्धता के कारण कर्मकाण्ड में फंसे लोगों की आर्थिक दशा अत्यन्त शोचनीय और अस्तव्यस्त थी। वर्ग-वैषम्य से जीवन इतना विषाक्त एवं आविल हो गया था कि स्नेह-ममता सौहार्द-बन्धुत्व के स्थान पर ईर्ष्या, द्वेष घृणा, हिंसा का चतुर्दिश बोल-बाला था इस घोर सामाजिक वैषम्य दीनदशा धार्मिक अज्ञानता अपार समृद्धि और राग के कारण उनके मन में प्रव्रज्या लेने का विचार उद्-बुद्ध हुआ। अति हिंसा से अहिंसा, अति दुःख-दर्द से दया-करुणा, अति वैषम्य से ऐक्य, अति राग से वैराग्य की उद्भावना होती है। ऐसा ही महावीर के साथ हुआ। जब उनके अन्तःकरण में वैराग्य-भावना उदित हुई तो लोकान्तिक देवों ने इसको परम मांगलिक समझा, स्वागत किया कि तप-त्याग-संयम के द्वारा वह विश्वज्ञाता, विश्वद्रष्टा बनकर प्राणि-मात्र का समुद्धार करेंगे। महावीर ने अपनी प्रव्रज्या लेने का प्रस्ताव माता-पिता के समक्ष रखा। यह सुनते ही माता पर तो जैसे वज्रपात हो गया, वह पुत्र स्नेह में विह्वल, आकुल हो विमूर्च्छित हो गईं। लेकिन देवों ने उसे यह कहकर प्रबुद्ध किया कि "तू वीर पुत्र की वीर जननी है, तेरा पुत्र जगदुद्धार करेगा, वह वज्रवृषभनाराच संहननशील है।" फिर भी माता त्रिशला जैसे ही निर्जन वन के भयावह सन्नाटे, और हिंसक पशु का स्मरण करती वैसे ही शोकाकुल हो अचेत हो जाती। महावीर ने माता-पिता के निधनोपरान्त अपने भाई नंदिवर्धन की आज्ञा लेकर प्रव्रज्या ग्रहण की। उन्होंने पूर्ण वैभव, राग से परिपूर्ण राजमहल में अपने जीवन के २८ वर्ष ७ मास और १२ दिन व्यतीत किये। यह एक बात विशेषतया उल्लेखनीय है कि जब महावीर राजमार्ग से खण्डवन की ओर प्रव्रज्यार्थ जा रहे थे, सहस्रों लोग उनकी जय-जयकार कर रहे थे तब हरिकेशी चाण्डाल जनार्णव को चीरता हुआ तीव्रगति से महा-वीर की ओर बढ़ा चला आ रहा था। लोगों ने उस अस्पृश्य, चाण्डाल को रोकना चाहा मगर महावीर के यह कहने पर कि 'रोको मत, आने

हो, सभी एक दम आश्चर्यान्वित और निस्तब्ध रह गये और देखते ही देखते वह चाण्डाल महावीर के चरणों में गिर पड़ा। भगवान ने उसे गले से लगाया और उसे शुभाशीष दिया। यह था उनका समानता का आदर्श, यह थी उनकी जातीय एकता, यह थी उनकी मानवतावादी और बन्धुत्व की भावना। लेकिन उस समय तो जन-समुदाय के कौतूहल और आश्चर्य की थाह नहीं रही सभी आँख फाड़कर देखते रहे जब महावीर ने अपने शरीर से राजसी वस्त्र, आभूषण त्याग दिये और प्राकृतिक परिधान श्रमण वेश धारण कर 'नमः सिद्धेभ्यः' का महोच्चारण किया। दिगम्बरत्व स्वयं एक विराट तपश्चर्या है, यह तो पूर्णतः वीतरागी अथवा वासनावर्जित होने की चरम सीमा है। इसे पवित्रता का, त्याग का मूर्तरूप समझना चाहिए, असामाजिक या अपवित्र नहीं। हम प्राचीन शिल्प में नग्न प्रतिमाओं को जैसे वासना मुक्त दृष्टि से देखते हैं उसे न असामाजिक समझते हैं और न अपवित्र। नग्नत्व या दिगम्बरत्व तो एक दर्शन है इन्द्रियजन्य वासना को दग्ध करने का दर्शन। दग्ध इन्द्रियों में विकारवृत्ति उसी प्रकार उत्पन्न नहीं हो सकती जिस प्रकार दग्ध बीज उग नहीं सकता। महावीर के नग्नत्व का अभिप्राय यही था कि उन्होंने शरीर को सुख पहुँचाने वाली सकल विधियों का परित्याग किया, त्याग से मुक्ति के मार्ग का अनुसरण किया। मगसिर कृष्ण दशमी सोमवार २९ दिसम्बर ५६९ ई० पू० को दीक्षा ग्रहण की। ज्ञातृ खण्ड वन में निरावरण हो शालवृक्ष के नीचे घोर, दीर्घ तपश्चर्या प्रारम्भ की।

तपश्चर्या और कैवल्य : महावीर

अत्युग्र तप करते हुए विघ्न-बाधाओं अरिष्टों-उपसर्गों, ... शील मन से सहन किया। महान सिद्धि के लिए महान तप-कठिन श्रम करना ही पड़ता है और जब सिद्धि कैवल्यज्ञान (Total Omnisci-ence) हो तो उसके लिए तपस्या (Ascetic Penance) की कठिन क्रिया (Exertion) कितनी असह्य होगी! उन्होंने तप और परिषहों की अग्नि में स्वयं को तपाकर कंचन बना दिया। कभी ग्रीष्म के प्रचण्ड ताप को सहन करते तो कभी झुलसाने वाली गर्म लुओं के थपेड़े सहन करते और आग उगलते सूर्य से उत्तप्त पाषाण-खण्ड पर अविचल भाव से तपस्या में तल्लीन रहते। शीतर्तु की तीक्ष्ण तीर-सी चुभने वाली बर्फीली हवाओं में निर्वसन किसी सरिता-तट पर अथवा किसी उपत्यका

साधनारत रहते कभी पावस की अविरल झड़ी और तूफानी झंगड़ों में, घनों के भयाकुल, भयावह गर्जन-तर्जन में ध्यानस्थ रहते। हाथी की चिंघाड़, सिंह की दहाड़, साँप की फुंकार सभी से निर्भय होकर, सभी वस्तुओं से पराङ्मुख, अनासक्त, असंग, निर्ग्रन्थ होकर महावीर चिंतन-मग्न रहते और यदि विधि-अनुसार भोजन मिलता तो निस्पृह, निरीह भाव से ग्रहण करते नहीं तो निराहार, निर्जल रहते। निरन्तर तपश्चर्या करने से उनकी पूर्वकर्मराशि निर्जीण होने लगी, दुर्द्धर्ष कर्मों का क्षय होने लगा उनका प्रच्छन्न तेज अभ्युदित होने लगा। एक ओर आत्मा का कर्म-मल क्षीण होने लगा, दूसरी ओर आत्मा के प्रच्छन्न शुद्ध, परिष्कृत रूप का, तेज का उदय होने लगा। आत्मा कर्म-कञ्चुली को उतार कर मुक्ति का रूप-वस्त्र धारण करने लगी। काम, क्रोध, मान, लोभ, द्वेष कषाय स्वत नष्ट होने लगे। और फिर आत्मा पूर्ण रूपेण ज्ञान, दर्शन, सुख, बल की अनंतता अर्जित कर ज्ञाता-दृष्टा बन गया, सर्वज्ञ हो गया। महावीर वीतराग सर्वज्ञ हो गये, जीवन-मुक्त-परमात्मा या 'अर्हन्त' पद को प्राप्त हुए। यही आत्मोन्नति का चरमोत्कृष्ट होता है व्यक्तित्व के विकास की यही वह चरम सीमा है जहाँ वह परमात्मा-रूप हो जाता है। और एक दिन वह चिर स्मरणीय शुभ पावन घड़ी आई जब जृम्भिका नामक ग्राम के निकटस्थ ऋजुकूला सीता-कूल पर, शालतरु के नीचे प्रतिमायोग धारण किया, और साधना की चरमसीमा पर पहुँच गये। और अज्ञान मोह, अन्तराय का आवरण स्वत. फट गया। १२ वर्ष, ५ मास, १५ दिवस तक निर्बाध तपश्चर्या के अनन्तर उन्होंने प्रथम शुक्ल ध्यान की योग्यता अर्जित की। मोहनीय, ज्ञानावरण, दर्शनावरण, अन्तराय चार घातक कर्मों का क्षय अन्तर्मुहूर्त में करके वह सर्वज्ञ वीतराग, जीवनमुक्त परमात्मा त्रिकालज्ञ बन गये। कैवल्य ज्योति के रूप में उन्हें स्वात्मोपलब्धि हुई और वह 'अर्हन्त' पद को पूज्यार्थक पद को प्राप्त हुए। उन्हें कैवल्य ज्ञान की प्राप्ति[1]

१– हरिवंश पुराण में (२, ५६–५६) केवलज्ञान-प्राप्ति का उल्लेख इस प्रकार है–

मनः पर्ययपर्यन्त चतुर्ज्ञानमहेक्षणः ।
तपो द्वादशवर्षाणि चकार द्वादशात्मकम् ॥
विहरन्नथ नाथोऽसौ गुणग्रामपरिग्रहः ।
ऋजुकूलापगाकूले जृम्भिकाग्राममीयिवान् ॥
तत्रतार योगस्थः सालाभ्याशशिलातले । (शेष पृष्ठ १८ पर)

वैशाख शुक्ला दशमी रविवार २६ अप्रैल सन् ५५७ ई०पू० को हुई थी।

मार्मिक प्रसंग :- उनके तपश्चर्या-काल की एक अाध मार्मिक घटना का उल्लेख करना यहाँ अप्रासंगिक न होगा। महावीर तप करते, देश, प्रदेश का नगर-गाँव का, वन-खण्डों का भ्रमण करते रहते थे। एक दिन कौशाम्बी नगरी में भोजनार्थ आये। वहाँ वृषभानु सेट के तलघर में बंदी रूप में पड़ी चन्दना को ज्ञान हुआ कि महावीर कौशाम्बी आये, हैं उसके मन में लालसा उत्पन्न हुई कि उन्हें भोजन कराऊं "यादृशी भावना यस्य सिद्धिर्भवति तादृशी।" फिर क्या था चन्दना की शृंखलाएं स्वतः झनझना कर टूट पड़ीं और उसने अगाध श्रद्धा-भक्ति से महावीर को आहार कराया। एक ओर कोदों का आहार था, दूसरी ओर मुक्ति का उपहार था। एक ओर श्रद्धा-भक्ति थी दूसरी ओर सिद्धि थी। कुआं मानो स्वयं चलकर प्यासे के पास आ गया हो। इस प्रकार चन्दना के सतीत्व की ख्याति चतुर्दिश फैल गई, वह बन्धन-मुक्त हो गई और पूर्ण वैराग्य भाव से महावीर से दीक्षा ग्रहण कर उनके आर्यिक-संघ का नेतृत्व करने लगी। चन्दना का प्रसंग इसलिए भी रोमांचक है कि वह एक दिन जब अपने उपवन में क्रीडा-मग्न थी तब मनोवेग नामक विद्याधर उसके सौंदर्य पर मोहित हो गया और उसे अपहृत कर लिया, लेकिन अपनी पत्नी के भय और प्रकोप के कारण चन्दना को इरावती नदी के निकटस्थ बन में ही छोड़कर चला गया वहाँ चन्दना को श्यामांक नाम का भील अपने भील नरेश सिंह के पास ले गया। भील नरेश ने उसे कौशाम्बी के —— ------ सेठ वृषभानु के हाथों बेच दिया। सेठानी भद्रा ने ईर्ष्या दासी बनाया उनके सुन्दर लम्बे केशों को काटकर उसे विकृत रूप में बंदीगृह में डाल दिया, जहाँ उसकी पूर्ण उपेक्षा की जाती और रूखा-सूखा भोजन दिया जाता।

उन्होंने अपनी तपश्चर्या के काल में संख्यातीत एवं असह्य उपसर्गों

वैशाखशुक्लपक्षस्य दशम्यां षष्ठमाश्रितः। (पृष्ठ १७ के शेष)
उत्तराफाल्गुनी प्राप्ते शुक्लध्यानी निशाकरे।
निहत्य घातिसंघातं केवलज्ञानमाप्तवान् ॥ (हरिवंशपुराण–२,५६-५६)
महापुराण (६७, ५–६) और उत्तरपुराण (७४,३४८) में भी ऐसा ही प्रसंग मिलता है।

को सहन किया। श्मशान में भव नामक रुद्रपुरुष के हिंसात्मक आघातों को सहन किया। अस्थिनामक ग्राम में जब उन्होंने अपना प्रथम चौमासा गुजारा पाशविक मनोवृत्ति वाले एक यक्ष की घोर यातनाएँ सहन की। भीमकाय हाथी, भयंकर विषधर और न जाने कैसे भगवन पशुओं ने ध्यानमग्न महावीर पर बियाबान वनस्थली में, घोर रात के सन्नाटे में घातक आक्रमण किये। परन्तु महावीर अडिग, निश्चल बने रहे। विषदृष्टि सर्प चण्ड-कौशिक के तीव्र विषाघातों को भी उन्होंने सहन किया लेकिन चट्टान सदृश अडिग बने रहे। विष अमृत बन गया, हिंसा अहिंसा के सामने नतमस्तक हो गई। लोगों ने भी उन पर जुल्म ढाने में कोई कसर बाकी न छोड़ी, ग्रामांचल से ही उन्हें दूर भगा दिया जाता, कभी उन पर कुत्ते छोड़े जाते तो कभी ईंट-पत्थर बरसाकर उनका अभिवादन किया जाता, इसी प्रकार अनेकविध अत्याचार उन्होंने सहन किये, लेकिन कभी 'उफ़' नहीं, किया कोई प्रतिक्रिया प्रकट नहीं की। प्रतिक्रिया प्रदर्शित न करने वाला व्यक्ति स्वतंत्र आवेश-मुक्त, मोह, माया, लोभ, क्रोध, मान, अपमान सभी से मुक्त होता है। गाली के प्रति गाली, क्रोध के प्रति क्रोध, अपमान के प्रति अपमान, ईर्ष्या के प्रति ईर्ष्या, घृणा के प्रति घृणा हिंसा के प्रति हिंसा अहं के प्रति अहं इस प्रकार की प्रतिक्रिया से वह बालातर होता है ऊपर उठा रहता है। वह संकुचित नहीं उदार होता है, सहिष्णु होता है।

सम्बोधन :— कैवल्यज्ञान की प्राप्ति के ६६ दिन पश्चात ज्ञातपुत्र महावीर ने विपुलाचल पर्वत पर श्रावण कृष्णा प्रथम, १८ जुलाई रविवार ५५७ ई० पू० को अपना प्रथम उपदेश दिया। यों तो राजगृही के निकट विपुलाचल पर्वत पर जब महावीर पहुँचे और समवशरण बनाया गया तो यहाँ भी मौन रहे। विपुलाचल पर्वत पर पहुँचने से पूर्व भी कई-एक स्थानों पर समवशरण बनाये गये थे परन्तु कुछ दिन के पश्चात् वहाँ से वह मौन ही उठ खड़े होते थे। जब वह विपुलाचल पवत पर भी मौन रहे तो लोगों के आश्चर्य का कोई ठिकाना न रहा। उधर इन्द्र को अवधिज्ञान से इनके मौन रहने का कारण मालूम हुआ कि भगवान महावीर के मौन रहने का कारण यह है कि इस सभा में उनके गहन-गम्भीर उपदेश को हृदयंगम करने वाला कोई नहीं।

तदनन्तर उन्हें इन्द्रभूति गौतम का ध्यान आया जो एक प्रकाण्ड पंडित था और जिसके सैंकड़ों वेदज्ञाता विद्वान शिष्य थे, लेकिन था वह अतत्व-श्रद्धानी। इन्द्र ने फिर एक वृद्ध ब्राह्मण का वेश बनाकर इन्द्रभूति गौतम के पास जाकर यह श्लोक पढ़ा और कहा कि आप महाज्ञानी है मेरे गुरु ने यह श्लोक पढ़या था, वार्धक्य के कारण मैं इसका अर्थ भूल गया हूँ कृपया मुझे इस श्लोक का अर्थ समझा दीजिए

"त्रैकाल्यं द्रव्यषट्कं, नवपद् सहित जीवषट्काय लेश्याः ।
पंचान्ये चास्तिकाया, व्रतसमितिगतिज्ञान चारित्र भेदाः ।।
इत्येतन्मोक्षमूलं त्रिभुवनमहितैः प्रोक्तम हृदि् भर्गीशै :
प्रत्येति श्रध्धाति स्पृशति च मतिमान् यः स वै शुद्धदृष्टिः ।।

इन्द्रभूति यह श्लोक सुनकर अवाक् एवं स्तब्ध रह गया, सोच में डूब गया कि छः द्रव्य, नौ पदार्थ, छः काय जीव, छः लेश्या, पांच अस्तिकाय आदि से मैं आज तक अनभिज्ञ हूँ और उन्होंने अपनी अल्पज्ञता तथा अयोग्यता छिपाते हुए कहा "चलो तुम्हारे गुरु के पास चलते हैं उनसे शास्त्रार्थ करेंगे।" इन्द्र तो यही चाहते थे। गौतम जैसे ही समवशरण के समीप पहुँचे उनका सम्पूर्ण ज्ञानदर्प तिरोहित हो गया और अश्रद्धालु गौतम ने जैसे ही भगवान महावीर के दर्शन किये वैसे ही वह परमश्रद्धालु शिष्य बन गया और यह महावीर के वीतरागत्व से अत्याधिक प्रभावित हुआ तथा बाद में वहीं उनका प्रमुख और प्रथम 'गणधर' अर्थात ज्ञानधारण करने वाला बना। भगवान का उसी समय मौन भंग हुआ, वह शुभ दिन था श्रावण वदी प्रतिपदा, उस दिन भगवान महावीर के मुखारविंद से ये शब्द निकले —

"उप्पणेइ वा विणस्सेई वा धुवेइ वा"

(प्रत्येक वस्तु त्रिगुणात्मक होती है उत्पाद, व्यय और ध्रौव्य)

उनकी यह प्रथम देशना केवल ज्ञान प्रप्ति के ६६ दिन उपरान्त आरम्भ हुई जैसा कि हरिवंशपुराण (२,६१) में भी उल्लेख मिलता है –

षट्षष्टिदिवसान् भूयो मौनेन विहरन् विभुः ।
आजगाम जगत्ख्यातं जिनो राजगृहं पुरम् ।।
आरूरोह गिरिं तत्र विपुलं विपुलश्रियम् ।
प्रवोधार्थं स लोकानां भानुभानुदयं यथा ।।

श्रावणस्यासिते पक्षे नक्षत्रेऽभिजिति प्रभुः ।
प्रतिपद्यर्ह्नपूर्वान् शासनार्थमुदाहरत् ॥

समवशरण (Place of sermon) एक विशिष्ट प्रकार की धार्मिक विशाल सभा को कहते हैं इसका शाब्दिक अर्थ है समताभावी तीर्थंकर भगवान की चरण-शरण में जाना'। समवशरण में सभी सम्प्रदायों, धर्मों के लोग सम्मिलित हो सकते थे, स्त्रियों के प्रवेश पर कोई प्रतिबन्ध नहीं था। वैशाली, कौशाम्बी, श्रावस्ती, राजगृह, चम्पा, वाराणसी, मिथिला, हस्तिनापुर, साकेत, पाँचाल आदि नगरों-ग्रामों में बिहार करते हुए उन्होंने अपना चिन्तन लोकमानस के समक्ष रखकर उसे अत्यधिक प्रभावित किया और अनेक राजा, महाराजा, सार्थवाह, श्रेष्ठी, शूद्र, चाण्डाल सभी वर्गों के नर-नारी उनके शिष्य बने। यह शिष्य-समुदाय चतुर्विध संघों में व्यवस्थित था - साधु, साध्वी, श्रावक, श्राविका। उनके उपदेशों ने समाज के धार्मिक, आर्थिक राजनीतिक जीवन को अतिशय प्रभावित किया जिनके परिणाम स्वरूप यज्ञों में पशु-बलि बन्द होगई, क्रियाकाण्ड समाप्त हो गये। धार्मिक क्रियाएँ सभी के लिए सुलभ हो गईं। राजा के लिए जनकल्याण को उसका प्रमुख कर्तव्य घोषित किया और प्राणि मात्र के प्रति प्रेम, संवेदना, अहिंसा का अनुपालन करने का सदुपदेश दिया। उनके सदुपदेशों से प्रभावित होकर हिंसक - अहिंसक, अन्याचारी - सदाचारी, निर्दयी - दयालु, नास्तिक - आस्तिक, नृशंस सदयहृदय बन गये। इस प्रकार समाज से अज्ञान, भ्रम, अन्याय, अत्याचार, हिंसा आदि सभी पापकृत्यों के बादल छट गये और प्रेम, सहानुभूति, करुणा, अहिंसा से परिपूर्ण वायुमण्डल में लोगों को साँस लेने का सुखद अवसर मिला। 'तीर्थंकर के संघ में ११ गणधर, ७०० केवली, ५०० मनः पर्यय ज्ञानी १३०० अवधिज्ञानी, १०० विक्रिया-ऋद्धिधारक, ४०० अनुत्तरवादी, छत्तीस हजार साध्वी, एक लाख श्रावक और तीन लाख श्राविकाएं सम्मिलित थीं। इतनी विशाल संख्या से सहसा यही अनुमान लगाया जा सकता है कि उनकी देशना का कितना व्यापक प्रभाव पड़ा और वह कैसे सर्वसुलभ थी। वह ग्राम-ग्राम, नगर-नगर, देश-प्रदेश विहार करते, समवशरण करते भ्रमण करते रहे, इसी कारण सम्भवतः उनके विहार स्थलों को 'बिहार' प्रदेश कहा गया।

परिनिर्वाण: उन्होंने २६ वर्ष, ५ मास, २० दिन तक अपना धर्म-प्रचार किया और अन्ततः पावापुर आये। वहाँ ताल तलैयों से भरे वन में एक शिला पर विराजमान हुए। यहाँ आकर कुछ दिनों तक विहार नहीं किया और फिर कर्मों का क्षय कर कार्तिक कृष्णा अमावस्या की रात्रि के अन्तिम भाग में शरीर त्याग कर परमसिद्धि (मुक्ति) प्राप्त की। उनके परिनिर्वाण का वर्णन उत्तरपुराण (७६. ५०८, ५१२) में भी द्रष्टव्य है :-

इहान्त्यतीर्थनाथोऽपि विहृत्य विषयान् बहून् ।
क्रमात्पावापुरं प्राप्य मनोहरवनान्तरे ।
वहूनां सरसां मध्ये महामणि शिला तले ॥
स्थित्वा दिनद्वय वीतविहारो वृद्धनिर्जरः ।
कृष्णकार्तिकपक्षस्य चतुर्दश्यां निशात्यये ॥
स्वातियोगे तृतीयेद्ध - शुक्लध्यानपरायणः ।
कृतत्रियोगसंरोधः समुच्छिन्नक्रियं श्रितः ॥
हताघातिचतुष्कः सन्नशरीरो गुणात्मकः ।
गताः मुनिसहस्रेण निर्वाणं सर्ववांछितम् ॥

उनका यह परिनिर्वाण महोत्सव हस्तिपाल सहित १८ गण-राज्यों के गणमुखियों, असंख्य नर-नारी, और देव-गणों ने दीप प्रज्वलित कर मनाया। पृथ्वी से आकाश तक दीपों के प्रकाश-पुंज से आलोकित हो उठे। उस दिन से प्रत्येक वर्ष कार्तिक की अमावस्या को जर्जर झोंपड़ियों से लेकर भव्य प्रासादों तक यह द[illegible]
मनाया जाता है :

ततस्तु लोकः प्रतिवर्षमादरात् प्रसिद्धदीपालिकयात्र भारते ।
समुद्यतः पूजयितुं जिनेश्वरं जिनेन्द्र निर्वाणविभूति भक्तिभाक् ॥
हरिवंश पुराण, सर्ग ६६)

उनका परिनिर्वाण वर्ष १५ अक्तूबर सन ५२७ ई० पू० है। तब से आज तक सम्पूर्ण भारत में विभिन्न मतावलम्बियों के द्वारा दीपावली का शुभ, पावन पर्व पूर्ण हर्षोल्लास के साथ मनाया जाता है। परिनिर्वाण-स्मृति का ज्योति-स्तम्भ ही यह दीपावली है। यह निर्जरा ज्वाला में कर्म-बन्धनों की आहुति का पावन दिन है, यह हृदय में सत्यालोक भरने का दिन है, यह आत्मदर्शन की शुभ घड़ी है,

वस्तुत: ज्ञान दीप को आत्मा में प्रज्वलित करना ही इस महापर्व का मूलभूत संदेश है। दीपावली को हमें दीपमालाओं तक ही परिसीमित न रखें वरन् उसे आत्मा की गहराई में उतारें। प्रकाश का यह पर्व बाह्य अंधकार को नहीं, हृदय में अभिनिविष्ट अज्ञान तिमिर को, कर्मों को जलाने का दिन है, भावनाओं के उज्ज्वल प्रतीकों के समर्पण का दिन है। आज इस महा प्रकाश पर्व से राष्ट्रव्यापी अन्धकार को हिंसा, तस्करी, भ्रष्टाचार, उत्कोच, व्यभिचार, स्वार्थलिप्सा, ईर्ष्या, द्वेष, घृणा, असत्य के गहन अंधकार को नष्ट करने का संकल्प लेना चाहिए।

महावीर की पावन वाणी का प्रभाव:–भगवान महावीर के उपदेशों का प्रभाव साधारण जन से लेकर राजानायिकों तक सभी पर व्यापक रूप से पड़ा। राजगृह (मगधदेश) के राजा बिम्बसार श्रेणिक उनके परमभक्त और मतानुयायी थे, वह अपनी रानी चेलना के साथ उनके दिव्योपदेश सुनने आते थे। श्रेणिकसुत अभयकुमार ने मुनि दीक्षा ग्रहण की थी। श्रेणिक सुत वारिषेण बाल्यावस्था से ही धार्मिक वृत्ति का था, और प्रतिमायोग किया करता था। श्रेणिक सुत गजकुमार ने भी महावीर की शरण में जाकर, उनके उपदेश सुनकर दीक्षा ग्रहण की। चन्दना की एक बहिन मृगावती कौशाम्बी नरेश शतानीक से ब्याही थी। उनका पुत्र उदयन भी महावीर के उपदेशों से प्रभावित हुआ था। अजातशत्रु, नंदवंशीय राजा भी महावीर के अनुयायी थे। इन्द्रभूति गौतम के अतिरिक्त अन्य गणधर भी महावीर की वाणी से प्रभावित होकर उनके अनुयायी बन गये थे। बिहार में ही नहीं, बंगाल, उड़ीसा, गुजरात, राजपुताना, महाराष्ट्र, उत्तर भारत, मध्य प्रदेश सभी उनके प्रभाव में थे। सुदूर दक्षिण में पांड्य नरेश, चालुक्य नरेश, कदंब नरेश, होयसलवंश, राष्ट्रकूट राजवंश आदि उनके उपदेशों से प्रभावित थे। जैन मन्दिर, मूर्तियां, गुफाएँ, शिलालेख सभी मौन-मुखर रूप में महावीर के अमर-प्रेम प्रभाव के द्योतक हैं। क्या उड़ीसा में हाथी गुफा के शिलालेख, गया में जैन गुफाएं, मथुरा के आयागपट्ट, खजूराहो, देवगढ़, बाहुबलि की स्थापत्य, चित्तौड़ का विजय स्तम्भ, मैसूर में चन्द्रगिरि की गुफा महावीर और जैन-धर्म के व्यापक प्रचार-प्रभाव के ज्वलंत उदाहरण नहीं?

महावीर के निर्वाणोपरान्त ही उनके जीवन और उपदेश सम्बन्धी सामग्री का चयन किया जाने लगा और इस कार्य में उनके प्रमुख गणधर इन्द्रभूति गौतम ने, जो वेदों एवं छः अंगो के महान विद्वान थे अपने गुरु भगवान महावीर के जीवन - चरित्र को तथा पावन उपदेशों को संकलित किया। यह सब सामग्री १२ अंगों में संकलित की गई जिसे 'द्वादश गणि-पिटक' कहा गया। यद्यपि यह सामग्री आज अनुपलब्ध है तो भी उसका फुटकर वर्णन अर्द्धमागधी साहित्य में प्राप्य है। महावीर के निर्वाण के ६८० वर्ष पश्चात् वलभी में देवर्धिगणी क्षमा श्रमण द्वारा एक विराट-मुनि सम्मेलन बुलाया गया। उसमें महावीर के उपदेशों को ११ अंग, १२ उपांग, १० प्रकीर्ण ६ छेद सूत्र, ४ मूल सूत्र, २ चूलिका सूत्र को लोक प्रचलित अर्द्धमागधी भाषा में लिपिबद्ध किया गया।

शलाकापुरुष महावीर के जीवन-चरित्र में, उनके उपदेशों में वह चुम्बकशक्ति विद्यमान है कि प्राचीन काल से अद्यावधि साहित्यकार उनकी ओर स्वतः आकृष्ट होते रहे हैं। शौरसेनी प्राकृत में यतिऋषभ ने 'तिलोय पण्णति' (त्रिलोक-प्रज्ञप्ति) नामक ग्रन्थ की रचना की। महाराष्ट्री प्राकृत में 'पउम-चरिय' में महावीर का जीवन चरित्र अंकित है। संस्कृत में 'पद्मपुराण' 'वर्धमान-चरित' आदि में उनकी जीवन गाथा का वर्णन है। अपभ्रंश मे पुष्पदन्त का महापुराण, विवुध श्रीधर का 'वड्ढमाणचरिउ' आदि महावीर के जीवन पर आधृत है। संस्कृत के 'वर्धमान पुराण' से अनुप्रेरित होकर कन्नड में भी नागवर्म क [illegible] पुराण, आचण्ण का 'वर्द्धमान पुराण' पद्म का 'वर्द्धमा[illegible] में आये। उधर बौद्ध त्रिपिटक 'निग्गंठ - नातपुत्र' (निग्र[illegible] में महावीर और उनके उपदेशों का वर्णन मिलता है। अब तो हिन्दी में भी जैन धर्म और महावीर के जीवन चरित्र पर गद्य-पद्य में महत्वपूर्ण रचनाएं प्राप्त होती हैं। श्री जिनेन्द्र वर्णी, आचार्य तुलसी, मुनि विद्यानन्द जी का कार्य इस दिशा में विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

महावीर और गौतम :— महावीर के समसामयिक अन्य धर्मप्रचारकों में महात्मा बुद्ध (५८२-५०२ ई० पू०) का नाम विशेषतया उल्लेखनीय है। उन्होंने पहले तो जैन साधु पिहितास्त्रव से साधुदीक्षा

खी, कुछ समय तक जैन साधु का आचरण भी किया, परन्तु जब उसे अति कठिनसाध्य समझा तो बाद में लाल वस्त्र धारण कर एक नया ही पन्थ चलाया। बुद्ध ने ज्ञान प्राप्त करने से पूर्व इतर धर्मों का, उनके आदर्शों, सिद्धान्तों का परीक्षण-अन्वीक्षण करके कुछ मान्यताओं और सिद्धान्तों को अंगीकार कर एक नया ही 'मध्यम मार्ग' प्रस्तुत किया। जाहिर है नवीनता के प्रति सभी में आकर्षण होता है, अतएव लोगों ने गौतम बुद्ध के इस 'मध्यम मार्ग' को हाथों-हाथ लिया। लेकिन यह बात ध्यातव्य है कि महावीर और गौतम बुद्ध दोनों ने सामाजिक एकता को प्रश्रय देते हुए नैतिक उच्चादर्शों की प्रतिष्ठा की और वह भी लोगों की अपनी भाषा में। उनके नैतिक आदर्शों और धार्मिक सिद्धान्तों की आज भी अपूर्व महत्ता है, समय की धूलि उन पर नहीं पड़ी है वरन् समय के बढ़ने से, परिवर्तन से उनकी आभा में निखार आया है, उनकी दीप्ति में नूतन चमक आई है। महात्मा गांधी ने उन्हीं के सत्य और अहिंसा के दिव्य अस्त्रों से दुर्जेय अंग्रेज जाति पर विजय प्राप्त की थी लेकिन महात्मा बुद्ध और भगवान महावीर के सिद्धान्तों में अन्तर भी काफी है। महात्मा बुद्ध ८० वर्ष तक जीवित रहे, जबकि महावीर केवल ७२ वर्ष तक। बुद्ध का 'मध्यम मार्ग' नवीन था अतः उसमें आकर्षण था, 'अपीलिंग पावर' अधिक थी जबकि महावीर को पुरातन और नूतन सिद्धान्तों का समन्वय कर एक सद्भावना और समझौते का मार्ग प्रशस्त करना था। अहिंसा का प्रचार दोनों ने किया, लेकिन महावीर की अहिंसा में सर्वव्यापकत्व था, वह मनुष्य ही नहीं प्राणी मात्र तक फैली थी बुद्ध की अहिंसा मानव मात्र तक ही सीमित थी : अहिंसा का जैसा कठोर पालन महावीर के अनुयायी करते थे वैसा गौतम बुद्ध के नहीं करते थे, वे पूर्णतः निरामिषभोजी नहीं बन सके। यह माना कि दोनों का राजमहलों में पालन-पोषण किया गया लेकिन दोनों की प्रव्रज्या की विधि पृथक थी – गौतम बुद्ध अपनी पत्नी यशोधरा और पुत्र राहुल को गहरी नींद में सोता हुआ छोड़कर चोरी छिपे महल से निकल खड़े हुए, मानों पत्नी-पुत्र का उन्हें इतना मोह था कि उनके सामने – उन्हें अकेला छोड़कर वह सन्यास नहीं ले सकते थे। लेकिन महावीर की महानता को क्या कहें – उनके वीतरागत्व की कहां तक सराहना करें कि दिन दहाड़े – सबके सामने महलों से निकल पड़े पूर्णतः निरासक्त, निर्ग्रन्थ, निर्मोह।

महावीर और राम :- राम ने भी राज महल का, सुख-वैभव का परित्याग किया लेकिन उनका अभीष्ट ज्ञान प्राप्ति नहीं था। राम ने तो पिता की आज्ञा से--बल्कि उन आदेश से अयोध्या का परित्याग किया। उनके पीछे न्याय और नीति की मर्यादाएं थीं। फिर वन-वास के समय उन्हें कई राक्षसों का दमन करना पड़ा तो कहीं बालि का वध करना पड़ा इनसे बढ़-कर उन्हें कोणपकुल रावण के साथ भयंकर घमासान युद्ध करना पड़ा। महावीर को इस प्रकार युद्ध नहीं करना पड़ा। उन्होंने अपने शत्रुओं विरोधियों को युद्ध से पराजित न कर सहिष्णुता और अहिंसा से पराजित किया -- चाहे वह हिंसक यक्ष था भयंकर चन्द्रकौशिक विषधर था। उधर कृष्ण भगवान को भी महाभारत का युद्ध लड़ना पड़ा कंस, शिशुपाल आदि का वध उन्ही के द्वारा किया गया। लेकिन भगवान महावीर के पास तो अहिंसा का प्रेम और सत्य का, सहिष्णुता का विशेष संबल था, इन अमोघ अस्त्र-शस्त्र के रहते शत्रु से लड़ने की कोई आवश्यकता ही नहीं पड़ती। वैराग्य की वह चरमसीमा विश्व के किसी धर्मप्रवर्तक महापुरुष में देखने को नहीं मिलती जो महावीर में दर्शनीय है।

महावीर और मोहम्मद: भगवान महावीर और पैग़म्बर मोहम्मद दोनो के जीवन काल में लगभग बारह सौ वर्षों का अन्तर है। महावीर २७ मार्च ५९९ ई०पू० उत्पन्न हुए और १५ अक्तूबर ५२७ ई० पू० निर्वाण को प्राप्त हुए। मोहम्मद साहब का जन्म मार्च ५७० और मृत्यु सन् ६२२ है। अर्थात एक ई० पू० छटी शताब्
के बिहार स्थित कुण्डपुर ग्राम में हुए जो आज एक [illegible] त्र तीर्थस्थान माना जाता हैं। दूसरे मोहम्मद साहब अरब मरुस्थल के प्रसिद्ध शहर मक्का में छटी शताब्दी में पैदा हुए। भगवान महावीर आज से २६०० वर्ष पहले हुए और मोहम्मद साहब १४०० वर्ष पहले। जहां भगवान महावीर के पिता क्षत्रिय नृपति सिद्धार्थ थे वहां मोहम्मद साहब के पिता अब्दुला कुरैश सम्प्रदाय के सम्भ्रान्त वंश बनी हाशम से थे। एक को केवल ज्ञान की प्राप्ति लगभग ४२ वर्ष की अवस्था में हुई, दूसरे को भी नबूवत (नबी या पैग़म्बर) लगभग ४० वर्ष की अवस्था में मिली। दोनों का जीवन आरम्भ से ही वैराग्य पूर्ण रहा।

समाज के व्यभिचार हिंसा, अधर्म, नैतिक पतन को देखकर वे कराह उठे। अन्ततोगत्वा एक ने तो भरी जवानी में राज-वैभव का परित्याग कर निरावरण होकर प्रव्रज्या ग्रहण की और जीवनपर्यंत अविवाहित रहे (लेकिन श्वेताम्बर सम्प्रदाय उनके विवाह को स्वीकारता है) दूसरे ने भी सांसारिक वैभव से पराङ्मुखता प्रदर्शित की और २५ वर्ष की अवस्था में खदीजा नाम की विधवा स्त्री से विवाह किया। चूंकि दोनों का जीवन आदि से अन्त तक त्यागमय था अतः उनका मान-सम्मान भी दूर-दूर तक किया गया और युगों-युगों से किया जा रहा है। संसार में, विशेषतया भारत में उन्हीं महापुरुष को पूज्यास्पद माना गया जो सर्वथा त्यागी थे, क्योंकि भारत की जीवन-दृष्टि पश्चिम के समान भोगवादी कभी नहीं रही, वह अनादि काल से त्यागवादी रही है। शुद्ध भोगवाद को यहां कभी प्रोत्साहन नहीं दिया गया। भोगवाद का प्रचार चार्वाक-दर्शन में ही किया गया, और उसी को इस देश ने स्वीकार नहीं किया।

दोनों के युग की सामाजिक दशा पर यदि दृष्टिपात किया जाये तो ज्ञात होगा कि भगवान महावीर के युग में कर्मकाण्ड की प्रधानता थी, मनुष्य, पशु सभी की बलि दी जाती थी। समाज में घोर विषमता थी। मनुष्य की कोई प्रतिष्ठा प्राप्त नहीं थी, हिंसा, अत्याचार, अधर्म, धर्मान्धता का प्रसार था। दास प्रथा आम थी, यहां तक नारी का भी क्रय-विक्रय किया जाता था। चन्दना इसका ज्वलन्त दृष्टान्त है जिसे खुले बाजार बोली लगाकर बेचा गया। धार्मिक क्रियाओं में भी नारी को सम्मिलित होने के अधिकार से वंचित रखा गया था। हां वह भोग की सामग्री अवश्य समझी जाती थी, इसके अतिरिक्त समाज में उसे कोई आदरणीय स्थान प्राप्त नहीं था। निरीह नर, पशु का बलिदान, उनका आर्तनाद, स्त्रियों की करुणाप्लावित दशा, समाज में फैला अधर्म,-व्यभिचार-विषमता की भावना से ही तो भगवान महावीर का अवतरण हुआ, जिसने घोर अत्याचारों, पापों, कुकर्मों की आग से तपती धरणी को प्रेम, करुणा, अहिंसा, समानता की शीतल-सुखद वर्षा से शीतल किया। उधर मोहम्मद साहब के युग के अरब पर दृष्टि डालिए तो वहां भी समाज में रक्तपात, हिंसा, व्यभिचार, पापपुंज, अधर्मता सभी कुछ वैसा ही था। नारी वहां भी भोग की सामग्री थी। लौंडी या कनीज के रूप में (नर दास के समान) उसका क्रय-विक्रय होता था, दास प्रथा का अधिक प्रचलन था। अकसर

लड़की का पैदा होना महा बुरा समझा जाता था और उसे पैदा होते ही जिन्दा मार दिया जाता था या जमीन में दफ़न कर दिया जाता था। मक्का स्थित कावा शरीफ, जहां विश्व के लाखों मुसलमान प्रत्येक वर्ष एक दिन - एक साथ हज का फ़रीज़ा अदा करते हैं, उस समय ३६० बुतों-मूर्तियों से भरा पड़ा था। प्रत्येक कुल की वहां एक कुलमूर्ति या कुलदेवता था जिसकी पूजा की जाती थी। यही नहीं, जैसे महावीर के युग में नर-बलि दी जाती थी मोहम्मद साहब के युग में भी यह प्रथा थी, अरब की रीति के अनुसार एक बार कुरैश के एक नवयुवक को देवता को बलि दी जाने वाली थी, लेकिन जब उस युवक के आकर्षण यौवन पर मक्का वालों को तरस आया तो उन्होंने एक ज्योतिषविद फ़ाल निकलवाया, जिसके द्वारा यह निश्चित किया गया कि इस युवक के स्थान पर एक सौ ऊंट कुर्बान किये जायें तो देवता प्रसन्न हो जायेगा। फिर ऐसा ही किया गया, देवता की खुशनूदी के लिए एक सौ ऊंट बलि किये गये और उस युवक को छोड़ दिया गया। जानते हैं वह युवक कौन था? वह युवक मोहम्मद साहब के ही पिता अब्दुल्ला बिन अब्दुलमुत्तलिब थे और इस घटना के बाद अब्दुल्ला का विवाह सुशील युवती आमना से किया गया था। क्या कुकृत्य नहीं थे उस समय अरब-समाज में? जुआ, शराब बहुत आम थे, युद्ध बहुधा मनोरंजन के लिए किये जाते थे। उर्दू के प्रसिद्ध कवि मौलाना हाली ने तत्कालीन दशा का स्पष्ट चित्रांकन इस प्रकार किया है —

चलन उनका जितना था सब वहशियाना,
फ़सादो में कटता था
हर एक लूट और मार में था यगाना,
न था कोई क़ानून का ताज़्याना।
वो थे क़त्लोग़ारत में चालाक ऐसे,
दरिंदे हों जंगल के बेबाक जैसे।
जो होती थी पैदा किसी घर में दुख्तर,
तो खौफ़ शमातम से राह में मादर।
फिरे देखती जब भी शौहर के तेवर,
कहीं जिंदा गाड़ आती थी उसको जाकर।
वो गोद ऐसी नफ़रत से करती थी खाली,
जने सांप जैसे कोई जनने वाली।

यह पैगम्बर मौहम्मद के प्रभावशाली व्यक्तित्व का ही परिणाम था कि ये जुआरी, शराबखोर, व्यभिचार, हिंसक मनुष्य भी यतीमों के विधवाओं के हमदर्द बने और कुकर्मों का परित्याग कर सच्चे अर्थों में मनुष्य बने, उनकी पाशविकता दूर हुई और मानवता आई।

दोनों ही महात्माओं ने समाज के -- अपने ही लोगों के अत्याचार सहन किये। तपश्चर्या काल में महावीर जब कभी किसी ग्रामांचल की ओर आते तो लोग उनका ईंट-पत्थर से स्वागत करते, कभी उन पर हिंसक कुत्ते छोड़कर जख्मी करते, कभी उनके मार्ग को कांटों से भर देते, यहां तक कि समाधिस्थ अवस्था में भी उनको अनेकविध कष्ट पहुँचाए जाते। यही हाल, ऐसा ही दुर्व्यवहार मोहम्मद साहब के साथ हुआ। मोहम्मद साहब अनपढ़ थे अशिक्षित थे अतः उन्हें उम्मी कहा जाता था लेकिन सत्यवादी और कर्तव्यपरायण थे अत उन्हें 'अमीन' (सच्च बोलने वाला) कहा जाता था। जब वह 'अमीन' मक्कानिकटस्थ एक 'ग़ारे हरा' हरा नामक गुफा में जाने लगा और वहां घण्टों एकान्त में बैठकर समाज की, मनुष्यों की पतितावस्था से, पापोन्मुखी दशा से चिंतित रहता, अपने परवरदिगार से दुआ करता कि इस कौम को पतन के गर्त में गिरने से, गुनाहों से बचाइये, और बहुत समय तक यह सिलसिला चलता रहा तो एक दिन दैविक वाणी का उन्हें आभास हुआ और खुदा ने उन्हें अपना पैगम्बर पैगाम पहुँचाने वाला संदेश-वाहक मनोनीत किया। फिर मोहम्मद साहब ने अपने नबी होने की - पैगम्बर होने की उद्घोषणा करते हुए एक खुदा की बंदगी का प्रचार करना आरम्भ किया। इस अप्रत्याशित, परमविरोधी, बात को अरब जनता सुनने को तैयार न थी, कोई अपने सैकड़ों कुल - देवताओं की मूर्तियों को तोड़ने - उनका परित्याग करने को तैयार नहीं था। फलतः मोहम्मद साहब विद्रोहात्मक वाणी का लोगों ने घोर अत्याचारों के साथ विरोध किया। बच्चे उनपर ईंट पत्थर फेंकते, स्त्रियां उनपर कूड़ा-कचरा डालती, कभी उनके रास्ते पर कांटे डाल जाते, कभी उनपर कुत्ते छोड़ जाते, कभी उनपर नमाज़ पढ़ने वक्त भारी वजन रखा जाता—क्या दुर्व्यवहार उनके लोगों ने उनके साथ नहीं किया ? इस प्रकार भगवान महावीर और पैगम्बर मोहम्मद की सद्वाणी का लोगों ने उन्हें कष्टप्रद यातनाएं देकर स्वागत किया। लेकिन दोनों सत्य पथ पर अडिग, अविचल रहे और अन्ततः अज्ञान

पर ज्ञान की, अधर्म पर धर्म की विजयपताका फहराकर ही छोड़ी।

सामाजिक एकता :— दोनों महाज्ञानी, समाजोद्धारक मनुष्यों की समानता और एकता पर बल देते थे। भगवान महावीर ने चाण्डाल हरिकेशी को गले लगाकर अस्पृश्य का, अन्त्यज का सप्रेम स्पर्श करके वैसा ही व्यवहार किया जैसा राम ने केवट के साथ किया था। महावीर ने दासी - क्रीतदासी के रूप में चन्दना का भोजन स्वीकार करके उसे वही आदर दिया जो राम ने भीलिनी शबरी को या कृष्ण ने विदुर को दिया था। पैगम्बर मोहम्मद ने तो स्पष्टतः घोषणा की, कि जैसा तुम खाओ वैसा अपने गुलाम या नौकर को भी खाने - पहनने को दो। उसकी सामर्थ्य से अधिक उस से काम न लो, अगर अधिक काम हो तो उसे सहारा दो, उसकी मदद करो। उन्होंने अमीर-गरीब, उच्च-निम्न छोटे-बड़े के भेद भाव की दीवार गिरा दी और समाज के सब मनुष्यों को - सभी वर्गों, सम्प्रदायों और फिरकों के लोगों को एक ही प्रेम-सूत्र में एकता की, समानता की भावना में बांध दिया। तभी तो डॉ० इकबाल ने कहा है —

> एक ही सफ़ में खड़े हो गये महमूदो अयाज़ ।
> न कोई बन्दा रहा और न कोई बन्दा नवाज ।।

आज जो जातीय भेद-भाव और साम्प्रदायिकता की विषाक्त भावना समाज में देखी जाती है उससे देश का कभी हित नहीं होगा। जातीय एवं सामाजिक एकता से जाति का, देश का राष्ट्रीय एकता की जड़ें मजबूत होंगी। भगवान महा- ा धर्म-ध्वजा के नीचे विभिन्न मतावलम्बियों, सम्प्रदायों, वर्गों को लाकर एक ही मंच पर खड़ा कर दिया। सभी धर्मों के लोग उनके 'समवशरण' में एक स्थान पर बैठकर दिव्यवाणी से आनन्दाप्यायित होते थे—मानो उनके प्रताप ने सामाजिक विषमता को मूलोच्छिन्न कर दिया — तुलसी की पंक्ति में राम के स्थान पर 'वीर' रखकर कहा जा सकता है-"'वीर' प्रताप विषमता खोई'। महावीर के समान मोहम्मद ने समाज में एकता और भाई चारे का सद्भावनापूर्ण वातावरण तैयार किया। उनके साथ — एक ही पंक्ति में खड़े होकर सभी तो नमाज पढ़ते थे, उन्होंने दास को दास नहीं, मनुष्य समझकर उसका आदर किया। उनके इस प्रभाव के कारण दास प्रथा धीरे-धीरे विलीन होने लगी

और लोग दासों को आजाद करके उनके साथ अपनी लड़की का विवाह भी करने लगे। उन्होंने कर्म की महानता और पवित्रता का पाठ लोगों को सिखाया। वह स्वयं अपने कपड़ों में पेवंद लगाते, जूता ठीक करते, घर में झाड़ू लगाते, ऊँट की देखभाल करते। जब मस्जिद बनाई गई तो उन्होंने स्वयं मजदूरों की तरह काम किया। उन्होंने उजरत लेकर मक्का वालों की बकरियां चराई थीं। एक हदीस में उन्होंने कर्म की महानता (Dignity of Labour) प्रकट करते हुए फरमाया "कोई व्यक्ति उससे बेहतर रोटी नहीं खाता जो वह अपने हाथ से काम करके खाता है" (बुखारी ३४-१५)। उन्होंने अन्यत्र (मुसलिम हदीस) फरमाया कि "वह व्यक्ति जन्नत में दाखिल न होगा जिसके शर (अन्याचार) से उसका पडोसी सुरक्षित न रहे।" इस प्रकार उन्होंने सभी के साथ समान व्यवहार करने का आदेश दिया और यही बात भगवान महावीर ने भी कही "मित्ती मे सब्ब भूएसु" मेरी सब से मैत्री है। सभी प्राणियों को समान मानना चाहिए चाहे वह शत्रु हो या मित्र "समया सब्ब भूएसु सत्तु मित्तेसु वा जगे।" (उत्तराध्ययन सूत्र १९-२५)

अपरिग्रह: भगवान महावीर, जो जीवन पर्यंत निर्वसन अनिकेतन रहे, का जीवन तो अपरिग्रह का मूर्तरूप है। उनके दिगम्बरत्व या नग्नत्व के पीछे यह दर्शन है कि 'कम से कम' वस्तुओं का संग्रह किया जाये यानी "सादा-जीवन उच्च विचार"। महावीर ने अधिक बल दिया है धन के अपरिग्रह पर, अस्तेय पर। उन्होंने यह अवश्य माना है कि" व्यवहार में, जीवन यापन के लिए धन आवश्यक है। उसके उपार्जन पर नहीं, अनपेक्षित संग्रह पर, जमा करने या 'होर्ड' करने पर घोर आपत्ति व्यक्त की और उसे महा अन्याय तथा विषवत् माना है

वित्तेण ताण न लभेयमत्ते, इमामि लोह अदुवा परत्था।
दीवप्पणट्ठेव अणंत मोहे, न माड्य दट्ठ मद्दठुमेव ॥

(उत्तराध्ययन सूत्र, ४ अध्याय)

यदि गहराई से विचार किया जाये तो स्पष्ट विदित होगा कि न्यायोचित और शुद्ध निष्कपट रीति से शुद्ध धन एकत्रित करके कोई धनाढ्य नहीं बन सकता। जाने-अनजाने रूप में कुछ ऐसे अनुचित,

असंगत और न्यायविहीन साधन अपनाए जाते हैं जिससे धन सैलाव के पानी की तरह बढ़ता है; एकत्रित होता है। नदी में सैलाब केवल उस वर्षाजल से नहीं आता जो नदी पर पड़ता है वरन् उस जल से आता है जो यत्रतत्र के छोटे-बड़े गन्दे नालों से प्रवाहित होता हुआ नदी में गिरता है –

> शुद्धैर्धनैर्विवर्धन्ते कदापि न सम्पदः ।
> न हि स्वच्छाम्बुभिः पूर्णाः कदाचिदपि सिन्धवः ।
>
> (आत्मानुशासन–३५)

भगवान् महावीर ने अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह इन पांच महाव्रतों के परिपालन पर सर्वाधिक बल दिया। वास्तव में इनके अनुक्रम पर यदि सूक्ष्मता से विचार किया जाये तो ज्ञान होगा कि अपरिग्रह की प्राप्ति अहिंसा, सत्य, अस्तेय और ब्रह्मचर्य के अनुकूलाचरण करने से ही सम्भव हो सकती है, जो व्यक्ति हिंसा करता है, झूठ बोलता है, चोरी करता है, कामवासना में लिप्त रहता है – कामासक्त है वह भला निष्परिग्रही कैसे बन सकता है ? वह तो परिग्रही है और परिग्रही को सद्गति मिल नहीं सकती, क्योंकि परिग्रही होने से आदमी लोभी, लालची होता है, और भगवान बचाये लालच से यह तो सभी अनर्थों का मूल है। परिग्रही व्यभिचरी होगा, भ्रष्टाचारी होगा, अन्यायी होगा, तस्कर और चोर होगा। महावीर का जीवन पूर्णतः अपरिग्रह पर ही अवलम्बित था क्या था उसके धन, मकान, गाड़ी, बर्तन, सेज नहीं कुछ भी तो न... दिगम्बर थे दिक् दिशाएँ ही उनका अम्बर थीं। पृथ्वी ही ... सेज थी। उधर मोहम्मद साहब के जीवन को देखिए जो अरब के शासक होकर भी दरवेशों जैसा साधु सन्यासियों जैसा जीवन व्यतीत करते थे। उनके पास विस्तर के नाम पर एक चटाई थी, बर्तनों में मिट्टी का एक लोटा, लकड़ी का एक प्याला था। कोई आलीशान बंगला नहीं – कच्चा मकान, जहाँ कभी-कभी चूल्हे से–रसोई से धुआँ भी नहीं उठता था– अनेक बार उन्हें निराहार ही रहना पड़ा था लेकिन कौन जानता था कि आज मोहम्मद साहब के घर खाने को भी कुछ है या नहीं। एक बार खाने को कुछ पथ्य रखा था कि एक मुसाफिर ने फ़क़ीर ने

दरवाजे पर आकर सदा दी, कुछ मांगा और देखिये उनकी उदारशीलता—अपरिग्रह कि वह पथ्य उठाकर स्मितवदन उस मुसाफिर को दे दिया— मजाल क्या माथे पर शिकन भी पड़ी हो। एक बार उनकी प्यारी लाड़ली बेटी फातिमा ने स्वर्णहार पहनने की इच्छा प्रकट की तो बेटी को यह समझाते हुए वर्जित किया कि ऐसे यानी सोने के आभूषण दोजखियों नारकियों के लिए हैं। जब उनका अन्तिम समय आया तो जो कुछ दीनार (रुपया-पैसा) घर में पड़े हुए थे अपनी पत्नी आयशा से कहकर सब को अनाथों, दीनों, दरिद्रों में बंटवा दिया। कुरान में मालोदौलत एकत्रित करने से सख्ती से मना किया गया है—"जो लोग सोना-चांदी जमा करते जाते हैं और उसे अल्लाह के रास्ते में खर्च नहीं करते उनको दर्दनाक अजाब (नरक-पीड़ा) की खबर दे दो। जिस दिन उसे जहन्नुम (नर्क) की अग्नि में गर्म किया जायेगा फिर उससे उनके माथे, पहलू और पीठ दागो जायगी, यह वह है जो तुमने अपने लिये जमा किया था तो उसका मज़ा चखो, जो तुम जमा करते थे।" (कुरान ६, ३४-३५)। कुरान में बार-बार यह आदेश दिया गया है कि धन-सम्पत्ति जमा करके न रखो, अनाथों को, दरिद्रों को उनका हक उनका भाग दो। इसलिए इस्लाम में एक प्रकार के दान-स्वेच्छा से दान देने को अनिवार्य माना गया है, वह है 'ज़कात'। प्रत्येक व्यक्ति को २½ प्रतिशत वार्षिक अपनी सम्पत्ति में से दीन-दुखी, दरिद्र-अनाथ को दान देना होता है। यह एक प्रकार का राजदेय शुल्क (इनकम टैक्स) है। इस प्रकार मोहम्मद साहब ने भी अपरिग्रह का आदेश दिया है। आज हमारे देश में जो वस्तुओं के मूल्य बढ़ रहे हैं उसका एक मात्र कारण यही है कि हम हिंसा करते हैं, जुल्म करते हैं, झूठ बोलते हैं, चोरी करते हैं—वस्तुओं को चोरी-छिपे जमा करके रखते हैं और भगवान महावीर, पैगम्बर मोहम्मद के निर्दिष्ट, उपदिष्ट मार्ग का अनुवर्तन नहीं करते।

अहिंसा दृष्टि: भगवान महावीर ने अपने पांच व्रतों में अहिंसा को सर्वप्रथम रखा है, अर्थात् हिंसा-वृत्ति अनिष्ट का मूल है। अहिंसा का अर्थ केवल किसी का बध न करना ही नहीं; इस पर कुछ और अधिक व्यापकता से, गहनता से विचार करना होगा। अहिंसा से भगवान महावीर का तात्पर्य यह है कि किसी भी प्राणी को—जीवधारी को किसी भी प्रकार का कष्ट न दिया जाये, किसी पशु को

दाना-चारा-पानी न देना, किसी मनुष्य को ऐसी बात कहना जिससे उसके हृदय को दुःख पहुँचे उसे कष्ट पहुँचे। सभी को तो जीने का समान अधिकार है। उन्होंने "जियो और जीने दो" के महा उदार सिद्धान्त का प्रचार किया। मोहम्मद साहब ने 'निरमज़ी हदीस' में एक स्थान पर फरमाया "अरहामू मन फिस्समा यरहामुकुम मन फिस्समा" अर्थात् तुम ज़मीन पर बसने वालों पर रहम (दया) करो अल्लाह तुम पर रहम करेगा। उन्होंने प्रतिकार या बदले की भावना की निन्दा की और कहा अगर कोई बुराई करे तो उसका बदला बुराई से मत दो उसे माफ़ करो, क्षमा करो। उन्होंने युद्ध के मैदान में 'जंगे बरदर' में भी शत्रु का बुरा नहीं चाहा, शत्रु को अभिशाप नहीं दिया। मानो उन्हें शत्रु-मित्र इसी प्रकार समान थे जैसे भगवान महावीर को। यह माना कि मोहम्मद साहब न कई-एक युद्धों में भाग लिया लेकिन किसी भी युद्ध में उन्होन किसी का वध नहीं किया किसी को आघात नहीं पहुंचाया। महावीर ने अन्यायी को दण्ड देने का आदेश दिया, राज्य में सुख शांति की सुव्यवस्था के लिए उसे उचित और वैध घोषित किया। यहाँ अहिंसा कायरता की भावना से उद्भूत नहीं, वह पराक्रमी, शक्तिशाली को ही शोभा देती है। गाँधी जी ने भी प्रत्येक स्थिति में अहिंसा को ही महत्व नहीं दिया, कुछ विशेष स्थिति में हिंसा को भी स्वीकार्य माना है। ऐसी विशेष स्थिति की ओर संकेत करते हुए कुरान में कहा गया है "फ़म-नितदा अलैकुम फ़ातदू अलैहि" – अर्थात् जो कोई तुम पर जियादती करे, तुम भी उस पर ज़ियादती करो (सूरे बक़र)। पशु-पक्षी पर दया करने का उपदेश देते हुए मोहम्मद साहब ने एक ह[illegible]
"बेज़बान जानवरों के मामले में तक़वा (संयम) से क[illegible]
सवारी करो जब वह अच्छी दशा में हों?" एक दूसरे स्थ[illegible] [illegible]हा, "एक व्यभिचारिणी स्त्री को बख़्श दिया क्षमा कर दिया गया, वह एक कुत्ते के पास से गुज़री जो एक कुएँ पर ज़बान निकाले हुए हाँप रहा था, प्यास से मरणासन्न था उसने अपना मोज़ा उतारा और अपने दुपट्टे से बाँधकर कुएँ से पानी निकालकर पिलाया, इस कारण उसे बख़्श दिया गया।" लेकिन एक बात में भारी मतभेद है; भगवान महावीर जहाँ किसी भी प्रकार की हिंसा को निंद्य मानते थे वहाँ कुरान की शब्दावली में मोहम्मद साहब ने मानव को 'अशरफुल

मखलूकात' यानी प्राणियों में सर्वश्रेष्ठ मानकर उसी के लिए संसार की प्रत्येक वस्तु का उपयोग न्यायसंगत माना यहां तक कि कुछेक पशु-पक्षियों का मांस खाना हलाल माना - (देखिये .कुरान शरीफ सूरे हज ११, ३१, ३६) । परन्तु मांसाहार को उन्होंने अनिवार्य घोषित नहीं किया, यह तो 'मन माने की बात' है, स्वभाव और रुचि की बात है। परन्तु फिर भी अहिंसा के क्षेत्र में भ० महावीर मोहम्मद से ही क्या विश्व के सभी धर्म प्रवर्तकों एवं महापुरुषों से आगे निकल जाते हैं। इस प्रकार कहा जा सकता है कि संसार के महापुरुषों या धर्म-प्रवर्तकों में यदि कोई पूर्ण शुद्ध अहिंसा का उद्घोषक है तो वह हैं जिनेन्द्र महावीर ।

नारी-उद्धार: भगवान महावीर ने नारी की पतितावस्था को देखकर और युग की नाड़ी पर हाथ रखकर नारी को सच्चे अर्थों में अर्द्धांगिनी और सहधर्मिणी माना 'धम्म सहाया'—वह धर्म की सहायिका मानी गई। जो कुछ समय पूर्व भोगविलास की सामग्री मानी जाती थी, गणिका, वेश्या, क्रीतदासी समझी जाती थी, अब वह समाज का एक सम्मानित अंग बन गई। यही नहीं महावीर ने उनको भिक्षुणी संघ में दीक्षित कर उसे शोचनीय अवस्था से ऊपर उबारा। मोहम्मद साहब ने भी नारी-उद्धार में स्तुत्य कार्य किया। उन्होंने भी नारी के भोगविलास की वस्तु, कुलदासी, लोंडी या कनीज, वेश्या जैसे घृणित रूपों को समाज में उच्छिन्न किया और उसे समानता का अधिकार प्रदान किया – वह समानता का अधिकार जिसके लिए आज डेढ़ हजार वर्ष बाद 'तथाकथित सर्वोन्नत देशों में नारियाँ सड़कों पर प्रदर्शन करती हैं, सभाएँ आयोजित करती हैं। कुरान में कहा गया है "यह तुम्हारे लिए न्यायोचित नहीं कि स्त्रियों को उनकी इच्छा के खिलाफ़ वरसे के तौर पर लो (कुरान ४, १६)। "मर्दों को उससे हिस्सा मिलेगा जो मां-बाप, परिजन छोड़ें (८, ७)।" इस प्रकार स्त्रियों को पिता, पति की जायदाद का भागी क़रार दिया गया। विधवा के पुनर्विवाह को भी मोहम्मद साहब ने उचित ठहराया। तलाक़ सम्बन्ध विच्छेद की बात कुरान में आई है लेकिन यह भी कहा गया है कि "अल्लाह तलाक़ देने वालों को अच्छा नहीं समझता।" यानी तलाक़ की इजाज़त तो है लेकिन बिना बात या

जब जी चाहा तलाक़ दे दिया यह बात नापसंद की गई है। यों तो इस्लाम में चार स्त्रियों से विवाह करने की बात स्वीकार की गई है, परन्तु यह कोई अनिवार्य नहीं। कुछ विशेष परिस्थितियों अथवा दशाओं में ही ऐसा विधान है। पुरुष की आर्थिक दशा, शरीर-सामर्थ्य का भी इसमें खास दख़ल है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि भगवान महावीर और पैगम्बर के अलग-अलग युग में और अलग-अलग देशों में अवतरित होने पर भी दोनों के विचारों में बहुत समानता है, दोनों की सामाजिक दृष्टि एक जैसी है। भगवान महावीर ने सबसे अधिक बल शुद्धाचरण पर दिया जिसके लिए उन्होंने अहिंसा, सत्य, अस्तेय आदि पाँच व्रतों के अनुकूल आचरण करने का उपदेश दिया तथा, त्रिरत्न में सम्यक् आचरण को श्रेष्ठ माना। मोहम्मद साहब ने 'हदीस बुखारी' में फरमाया, "तुम लोगों में सबसे अधिक प्रिय मुझे वह है जो तुममें आचरण की दृष्टि से सबसे अच्छा है।" दोनों महात्माओं ने अपरिग्रह का उपदेश दिया है। काश, सभी उनके इन सदुपदेशों को अपने आचरण में उतारते तो फिर नैतिक पतन, घूसखोरी, महँगाई के रसातल की ओर समाज न जा पाता।

भगवान महावीर अंतिम तीर्थंकर थे — २४वें तीर्थंकर। तीर्थंकर से अभिप्राय है जिससे संसार-सागर का संतरण किया जाय, पार किया जाय उसे तीर्थ कहते हैं और जो ऐसे तीर्थ को करे' संसार-सागर के संतरण का मार्ग बतलाए उसे तीर्थंकर [illegible]
महावीर ने लोगों को इस भव-सागर से पार होने का [illegible]।
पैग़म्बर मोहम्मद अंतिम पैग़म्बर थे उनसे पहले [illegible] पैग़म्बर हो चुके। पैग़म्बर अर्थात् पैग़ाम-संदेशा लाने वाला वह भगवान का संदेशा लोगों तक लाये और उस संदेश से लोगों को दुनियाए फ़ानी से (भंगुरत्व) निजात दिलायी। दोनों वीतरागी और सर्वज्ञ थे। उन्होंने बाह्ययुधों से लोगों को नहीं जीता, आन्तरिक आयुधों से विजय प्राप्त की मन पर विजय। तभी तो उनका प्रभाव आज तक अक्षुण्ण है। भगवान महावीर ने कोई नवीन धर्म की स्थापना नहीं की, केवल धर्म में खोई आस्था की पुनर्स्थापना की। पैग़म्बर मोहम्मद ने भी सहस्त्रों वर्षों से चले आते इस्लाम धर्म में ही पुनः प्राण फूँके —

उन्होंने भी कोई नवीन धर्म का प्रवर्तन नहीं किया। इन दोनों महात्माओं ने ज़िंदा मनुष्यों को क़ब्रों से, श्मशान से उठाकर पुनर्जीवन दिया। आज हमारे नेत्रों में उनका जीवन तैरता है, रगों में उनकी पावन वाणी दौड़ती है। इतिहास और साहित्य के पृष्ठों पर उनके जीवन फूल बरस रहे हैं। कितना दृष्टि साम्य है दोनों में।

जैन दर्शन:- भगवान महावीर अर्हद्दर्शन के संशोधित संस्करण हैं। उन्होंने भाव, ज्ञान एवं कर्म में सम्यकत्व एवं सामंजस्य प्रतिष्ठापित कर मोक्ष-मार्ग का पद-प्रदर्शित किया। 'तत्त्वार्थसूत्र' का प्रथम सूत्र भी यही है — "सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्राणि मोक्षमार्ग:" अर्थात् मोक्ष की सिद्धि सम्यक् दर्शन, सम्यक् ज्ञान और सम्यक् चरित्र इन तीनों के समीकरण द्वारा होती है मानो ये तीनों मोक्ष की त्रिवेणी हैं। सम्यक् दर्शन पदार्थ के वास्तविक रूप का श्रद्धान है, सम्यक् ज्ञान वास्तविक रूप का अभिज्ञान है और सम्यक् चरित्र उन कर्मों के न करने को कहते हैं जिनके करने से जीव या प्राणी कर्मबन्धन में जकड़ जाता है, यह लोक ही कर्मबन्धन में फंसा हुआ है —"लोकोऽयं कर्मबन्धनं।" सम्यग्दर्शन (Right Fairh), सम्यग्ज्ञान (Right knowledge) और सम्यक् चरित्र (Right conduct) ये जैनधर्म के 'त्रिरत्न' हैं जो क्रमश: भक्तियोग, ज्ञानयोग और कर्मयोग के समकक्ष हैं। सम्यक्दर्शन से ही लोकमूढता, देवमूढता, गुरुमूढता का विनाश होता है तथा बुद्धि अहंकार, धर्म अहंकार वंश अहंकार, जाति अहंकार, शरीर अहंकार, प्रभुता अहंकार, तप अहंकार, रूप अहंकार, नामक आठ अहंकारों का उत्सन्न होना है। आत्मा के पुद्गल से पृथक्ता का ज्ञान होने पर ही सम्यक् ज्ञान का उद्घाटन होता है जिसकी अभिव्यक्ति होती है सम्यक् चरित्र द्वारा। सम्यक् ज्ञान ही सम्यक्आचरण के उद्घाटन में सहायक होता है। महावीर ने सर्वाधिक बल चरित्रोत्थान पर ही दिया है, चरित्र ही तो धर्म है —"चारित्तं खलु धम्मो।" चरित्र ईश्वरीय रूप है, वही मनुष्यों को परमात्मपद तक ले जाता है। सच्चा धर्म ही विचारों को उद्बुद्ध करता है, एक वैचारिक क्रान्ति का सूत्रपात करता है, सच्चा धर्म ही आत्मा को समुन्नत करने वाला है। महावीर ने ऐसे ही सच्चे श्रमण धर्म का प्रतिपादन और प्रचार-प्रसार किया जो व्यक्तित्व-विकास और आत्मोत्कर्ष का संपादन करता है।

उन्हों ने दीर्घ तपश्चर्या द्वारा आत्मानुभूति प्राप्त की और इसी के द्वारा उन्हों ने जीवन-मूल्यों की अवधारणा की, श्रमण धर्म को अधिक व्यापक, तर्कसम्मत, बुद्धिगम्य, सर्वसुलभ और सर्वतोभावेन उपयोगी बनाया।

सत्ताः जैन धर्मानुसार सृष्टि अनादि और अनन्त है। यह छः अनादि द्रव्यों (तत्वों) वाली है (१) जीव (२) पुद्गल (३) धर्म (४) अधर्म (५) आकाश (६) काल। इनमें केवल पुद्गल ही मूर्तद्रव्य है जो स्पर्श, रस, गंध, रूप से बोधगम्य है। जीव चेतन है, शेष सब अचेतन हैं। संसार के कर्म-बन्धनों से मुक्ति होने पर ही जीव पुद्गल से मुक्ति पाता है, यहाँ जीव के गुण वही हैं जो वेदान्त-सम्मत आत्मा के हैं। वैदिकों के मतानुसार सृष्टि की रचना जिन पांच तत्वों (क्षिति, जल, पावक, गगन समीर) द्वारा हुई उनमें जीव, पुद्गल काल और आकाश का तो प्रकारान्तरेण अभिनिवेशन है केवल धर्म और अधर्म ही वहाँ अनुपस्थित हैं। भगवान महावीर ने दृश्य, अदृश्य संसार को ईश्वर-निर्मित न मानकर स्वयमेव अनादि-अनन्त माना है। जैन दर्शन कर्मवाद पर आधारित है। जैनेतर दर्शनों में सृष्टि की उत्पत्ति के साथ ईश्वर को कारण मानकर उसके साथ इसका सम्बन्ध स्थापित किया गया है।

ईश्वरः– न्यायदर्शन' के अनुसार सत्-असत् कर्मों का फल ईश्वर प्रदान करता है, जबकि 'वैशेषिक दर्शन' ईश्वर को सृष्टिकर्ता मानता है और 'योगदर्शन' में प्रकृति तथा जड़जगत् [illegible] परिणाम माने गये हैं। औपनिषदिक आधार पर शां[illegible] को सृष्टि का उपादान कारण माना है। जैन दर्शन ही [illegible] दर्शन है जो न तो ईश्वर को सृष्टिकर्ता मानता है और न उसे कर्म का प्रेरक। वह जीव के स्वतंत्र अस्तित्व में विश्वास करता है, और जगत का भी स्वतंत्र अस्तित्व स्वीकार करता है। जीव कर्म और फल को भोगने में स्वतंत्र है, सृष्टि स्वयं परिणमनशील है, ईश्वर उसका अधिष्ठाता नहीं –

> यः कर्ता कर्मभेदानां, भोक्ता कर्मफलस्य च ।
> संसर्ता परिनिर्वाता स ह्यात्मा नान्यलक्षणः ॥

भगवान महावीर ने चिर प्रतिष्ठित अवतारवाद की परम्परा का निषेध कर जीव को स्वतंत्र माना है। जीव शरीर-बन्धन-मुक्त

होने पर, कर्मों के क्षय होने पर स्वयं परमात्मा बन जाता है। प्रत्येक जीव अपना ईश्वर स्वयं है स्वयंभू और सर्वशक्ति सम्पन्न है। तात्विक दृष्टि से प्रत्येक आत्मा स्वतंत्र इकाई है, अपने आप में पूर्ण। कर्मबन्धन युक्त होने के कारण उसके गुण प्रकट नहीं होते जैसे जलदपटल से परावृत चन्द्रालोक प्रकट नहीं होता। अग्रांकित कारणों से महावीर ने ईश्वर को सृष्टि-कर्ता नहीं माना: (१) यदि ईश्वर सर्वशक्तिमान है तो समार में विषमताएँ क्यों हैं सभी को ईश्वर ने सुखी क्यों नहीं बनाया? (२) राग-द्वेष के कारण अगर ईश्वर किसी को सुखी, किसी को दुखी, किसी को धनी, किसी को निर्धन, किसी को हृष्टपुष्ट और किसी को अपंग, विकलांग बनाता है तो ऐसा राग-द्वेषी ईश्वर कैसे हो सकता है? (३) कर्मानुसार ईश्वर किसी को अच्छा बुरा बनाता है तो इसमें ईश्वर की महत्ता-प्रधानता नहीं वरन् कर्म की महत्ता-प्रधानता है (४) यदि ईश्वर आनन्दलीला के निमित्त सृष्टि रचता है (जैसा कि माना जाता है) तो ज्ञात हुआ कि ईश्वर आनंद-हीन है, उसके अन्दर इच्छाएँ हैं। आनद और इच्छाओं के भूखे को ईश्वर कैसे माना जा सकता हैं? इसमें कोई शका और संदेह नहीं कि ईश्वर की सत्ता का निराकरण करना सर्वमान्य नहीं। ऐसे धर्मों और सम्प्रदायों की कमी नहीं, जहाँ ईश्वर की सत्ता सौ फीसदी स्वीकार की गई है। इस्लामधर्म जो पूर्णतः एकेश्वरवाद पर आधृत है भला ईश्वर की सत्ता से कैसे पराङ्मुख रह सकता है?

व्यक्तित्व का विकास: पातंजलि ने 'क्लेशकर्मविपाक-शयैरपरमृष्टः पुरुषविशेष ईश्वर' (योगदर्शन) में जिस पुरुष विशेष को ईश्वर कहा है वह तीर्थंकरों के सदृश ही है। पुरुष पुरुषार्थक्षम शब्द है और पुरुषार्थ करने से ही मोक्ष की सिद्धि होती है तथा ऐसा पुरुषार्थ करने वाला परमेष्ठी है, अर्हन्त है, तीर्थंकर है। विद्वान पुरुष ब्रह्मरूप होता है "विद्वान पुरुषमिदं ब्रह्मेति मन्यते" (अथर्ववेद—११-८-३२)। अतः व्यक्ति अपने व्यक्तित्व का सम्यक् विकास कर ब्रह्मरूप को प्राप्त हो सकता है। संसार में मनुष्य से श्रेष्ठ कुछ नहीं —"न मानुषात् श्रेष्ठतरं हि किंचित्" (महाभारत शांतिपर्व, २९९-२०)। उसकी श्रेष्ठतम स्थिति ही तो ब्रह्मरूप है। तप और कर्म से सब कुछ अर्जित

किया जा सकता है। जैसा कि एडवर्ड केड ने कहा है—"We look out before we look in, and we look in before we look up." अर्थात् पहले बहिर्दृष्टि, फिर अन्तर्दृष्टि और तत्पश्चात ऊर्ध्व-दृष्टि। यह ऊर्ध्वदृष्टि ही आत्मा का—व्यक्तित्व का ऊर्ध्वीकरण है जो ईश्वर के तद्रूप होना है उसके सदृश बनना है, ईश्वर रूप होना है। व्यक्ति का ईश्वर-रूप होना किसी भी प्रकार न तो वेद-विरोधी है और न भारतीय धर्मपरम्परा के प्रतिकूल है। भारतीय अध्यात्म-दृष्टि नर में नारायणत्व की भावना को स्वीकारती है अर्थात् नर भक्ति द्वारा नारायण हो जाता है—'अहं ब्रह्मास्मि' इसी सत्य की ओर तो इंगित करता है। और सूफीमत के अनुसार सालिक शरीयत, तरीक़त हक़ीक़त, मारफ़त की चार मंजिलें पार कर 'अनल हक़' की (मंसूर ६२२ ई०) सदा बुलन्द करता है; "मैं ख़ुदा हूँ" का नारा लगाता है। जैनदर्शन तो कर्म का उपासक है, कर्मशीलता ही तो मनुष्य के लिए सकल निधियाँ, सम्पदाएँ बटोरकर लाती है। यहां मनुष्य अपने भाग्य का स्वयं निर्माता बनता है—"Man is the maker of his own Fate." डॉ० मोहम्मद इक़बाल ने यही सोचकर ही तो कहा है—

ख़ुदी को कर बुलन्द इतना कि हर तक़दीर से पहले,
ख़ुदा बन्दे से ख़ुद पूछे, 'बता तेरी रज़ा क्या है?'

कन्फ़्यूशियस ने ठीक ही तो कहा है "यदि कोई सद्गुणशीलता की ओर प्रतिदिन शक्तिपूर्वक बढ़ता जाता है तो वह अवश्य सिद्धि प्राप्त करता है।"

पंच परमेष्ठी: जैन-साधनानुसार कवल [illegible]
की साधना कर सकते हैं और वे ही कैवल्य को प्राप्त [illegible]
उन सन्यासियों को परमेष्ठी कहा जाता है; ये पाँच प्रक[illegible]ते हैं
जिनका समाहार 'पंच-परमेष्ठी है—(१) अर्हंत, (२) सिद्ध (३) आचार्य (४) उपाध्याय (५) साधु। इन्हें नमन करना पापों का क्षय करना है—

(१) **णमो अरिहंताणं**-:अरिहंत को मेरा नमस्कार है। विश्व में राग-द्वेष, काम, क्रोध आदि मनोविकार सबसे अधिक शक्ति-शाली शत्रु माने गये हैं। लाखों, करोड़ों योद्धाओं पर विजय पाने वाले विजेता भी इनके सामने नतमस्तक हो जाते हैं। अतः ऐसे प्रबल शत्रुओं

का नाश करने वाले अर्थात् राग-द्वेष का क्षय करने वाले महापुरुष को 'अरिहंत' कहते हैं। (सकल परमात्मा)

(२) णमो सिद्धाणं :-सिद्ध भगवान को मेरा नमस्कार हो। जिन महापुरुषों ने अपने को सिद्ध कर लिया है, कर्म-बंधन एवं कर्मजन्य उपाधियों से जो सर्वथा मुक्त हो गये हैं उन्हें 'सिद्ध' कहते हैं। (निकल परमात्मा)

(३) णमो आयरियाणं: आचार्य महाराज को मेरा नमस्कार हो। जो स्वयं आचार सम्पन्न हैं और संघ के अन्य साधुओं को आचार परिपालन की प्रेरणा देते हैं। संयम पथ के पथिक साधुओं को हित शिक्षा के द्वारा संयम में स्थिर करने वाले एवं संघ की मर्यादा को व्यवस्थित बनाये रखने वाले महापुरुषों को 'आचार्य' कहते हैं।

(४) णमो उवज्झायाणं:— उपाध्याय महाराज को मेरा नमस्कार हो। जो महापुरुष संघ के साधु, साध्वियों को आगमों, शास्त्रों का अध्ययन कराते हैं उन्हें 'उपाध्याय' कहते हैं।

(५) णमो लोए सव्वसाहूणं: लोक में स्थित सब साधुओं को मेरा नमस्कार हो। जो साधु पाँच महाव्रतों का पालन करते हैं और आरम्भ, परिग्रह, विषय-विकार, घर-परिवार आदि से निवृत हो चुके हैं उन्हें 'साधु' कहते हैं।

अहिंसा (Non-violence) महात्मा गाँधी ने कहा है— "महावीर स्वामी का नाम यदि किसी सिद्धान्त के लिए पूजा जाता है तो वह अहिंसा है। प्रत्येक धर्म की उच्चता इस बात में है कि उस धर्म में अहिंसा-तत्व का कितना प्राधान्य है। अहिंसा-तत्व यदि किसी ने अधिक से अधिक विकसित किया है तो वह महावीर स्वामी थे। मैं आप लोगों से विनती करता हूँ कि आप महावीर स्वामी के उपदेशों को पहचानें उन पर विचार करें और उनका अनुसरण करें।" वस्तुत: आज महावीर और अहिंसा पर्याय मालूम पड़ते हैं; महावीर में मानो अहिंसा मूर्तिमान हो गयी है, वह अहिंसा की तस्वीर हैं मुजस्म अहिंसा हैं। उनके द्वारा अभिनिर्दिष्ट पाँच महाव्रतों अथवा नियमों में अहिंसा सर्वोपरि है; ये पाँच व्रत हैं (१) अहिंसा (२) सत्य (३) अस्तेय (४) ब्रह्मचर्य (५) अपरिग्रह। कैसी अद्भुत बात है कि इन व्रतों का प्रारम्भ अहिंसा से होता है और पर्यवसान अपरिग्रह में होता है।

जो परिग्रही होना है वही हिंसावादी, असत्यवादी, चोर, शीलस्खलित या व्यभिचारी होता है, उसी से समाज में संघर्ष, द्वन्द्व, रक्तपात, भ्रष्टाचार, अन्याय, कदाचार के विनाशकारी झंझावात आते हैं लेकिन जो निष्परिग्रही होना है वह अहिंसा और सत्य का पुजारी होना है, वह कभी चोरी तस्करी नहीं करता और न ही वह शील-भ्रष्ट होता है, वह ब्रह्मचर्य का पालन करता है। वह तो संसार में सुख-शाँति का वातावरण उत्पन्न कर सभी से मैत्री-भाव रखता है। अहिंसावादी के लिए 'आत्मवत् सर्वभूतेषु' और 'वसुधैव कुटुम्बकम' होते हैं उसमें उदात्त भावों एवं गुणों का सागर उद्वेलित होता है। महावीर के इन पाँच व्रतों में से हम अहिंसा और अपरिग्रह पर ही विचार विमर्श कर रहे हैं।

वर्तमान अहिंसा की गंगोत्री यदि किसी को माना जा सकता है तो महावीर को। यों तो उनके समसामयिक गौतम बुद्ध ने भी अहिंसा का उपदेश दिया था लेकिन एक तो उनकी अहिंसा केवल मनुष्यमात्र तक ही परसोमित थी, दूसरे उनके अनुयायी तक पूर्णरूपेण अहिंसक नहीं बन सके; वे निरमिष नहीं बन सके। महावीर की अहिंसा अति व्यापक है; यह केवल मनुष्य जाति तक ही परसीमित नहीं उसका प्रसार तो पशु-पक्षी, कीट-पतंग सब तक समान रूप से है। संसार में सभी प्राणी तो जीना चाहते हैं "सव्वेपाणा जीविउ कामा।" सभी प्राणी मरने से डरते हैं "मरणभया"। सभी सुख की अभिलाषा करते हैं—"सुहसाया"। और सभी को दुःख प्रतिकूल मालूम पड़ता है—"दुक्ख पडिकूला"। फिर किसी को यह हक नहीं [illegible] है कि दूसरों को जीने के अधिकार से वंचित रखे, उनका व[illegible]

-विचारने की बात यह है कि जिसे (जीवन) हम दे न [illegible] लेने का अधिकार कैसे हो ! इसीलिए महावीर ने प्राणीमात्र का वध वर्जित घोषित किया — सव्वे पाणा न हंतव्वा"। "आचारांगसूत्र" (१–२) में कहा गया है कि सभी को जीवित रहने का समान अधिकार है अतएव किसी की हिंसा या वध नहीं करना चाहिए —

> "सब्बे पाणा पियाउया सुहसाया दुक्ख पडिकूला अप्पियवहा।
> पिया जीविणो जीविउकामा सब्वेसिं जीविय पियं॥"

अहिंसा में गगन जैसा व्यापकत्व है यानी राग, द्वेष, काम, क्रोध,

माया, लोभ, मान, शोक, भीरुता, कायरता आदि का पर्
ही अहिंसा है। राग आदि भावों का प्रादुर्भाव हिंसा है और
द्वेषादि का आविर्भाव न होना ही अहिंसा है। अमृतचन्द्र आच
यही भाव प्रकट किया है -

"अप्रादुर्भावः खलु रागादिनां भवत्यहिंसेति ।
लेपामोवोत्पत्ति हिंसेति जिनागमस्य संक्षेपः ॥

अहिंसक 'स्व' और 'अहं' की दीवारो को ढाकर अपना
विकास करता है। अहिंसा को 'आत्म-ज्ञान' कहा जा सकता है
सर्वत्र प्राणियों में 'आत्म-ज्ञान' का अनुभव करना । इसके
'आत्म-अज्ञान' हिंसा है, इसी से पृथकत्व उत्पन्न होता है, दूरी,
और द्वेष-भाव उत्पन्न होते हैं। अहिंसा में वैर-भाव कहाँ
प्रतिष्ठायां तत्सन्निधो वैरत्यागः"। घृणा के बदले में घृणा
उसका शमन नहीं होता, क्रोध से क्रोध बढ़ता है, वैर से वैर
मिटता नहीं है "न हि वैरेण वैरः शाम्यति"। वैर का इ
अहिंसा से, मैत्री से होता है। अहिंसाव्रती ही समस्त प्राणि
विश्व को अभयदान देता है "प्राणानामभयं ददाति सुकृति
हिंसाव्रतम्"। महावीर तो सभी प्राणियो को अभयदान देते थे
सभी जीवधारियों से मैत्री थी, प्रेम-भाव था। उन्होंने कहा
का सौंदर्य उज्जवल काजल में नहीं, वरन् दृष्टि में मित्रता
लगाने में है –

खम्माणि सव्वजीवाणं सव्वे जीवा खमंतु मे
मेत्ती मे सव्वभूतेसु वैरं मजभं न केनावि ।

वैदिक ऋषि ने भी ता मित्रता की प्राप्ति की कामना की
आशा मम मित्रं भवन्तु" ।

यह माना कि अहिंसा की भावना प्राग्वैदिक है, लेकि
चरम विकास तो जैन धर्म में अहिंसा की मूर्ति भगवान म
हाथों हुआ। जैनधर्म के प्रवर्तक प्रथम तीर्थंकर शलाकापुरु
ऋषभदेव का समुल्लेख ऋग्वेद में मिलता है, 'विष्णु पु
'भागवतपुराण' में उन्हें महायोग तथा अवतार भी मान
इन्होंने अहिंसा और अनेकान्तवाद का प्रवर्तन किया थ
में दो प्रकार की हिंसा मानी गई हैं—(१) द्रव्यहिंसा

हिंसा। जब किसी को मारने या पीड़ा पहुँचाने का भाव न होकर दूसरे को कुछ चोट पहुंचाई जाती तो उसे द्रव्यहिंसा कहते हैं और जब मारने या दुख देने का भाव रहता है तो उसे भावहिंसा कहा जाता है। भावहिंसा ही वास्तव में हिंसा है। जहां भावों में हिंसा विद्यमान है वही हिंसा है, चाहे किसी को न मारा जाये और न सताया जाये। हिंसा को और अधिक स्पष्ट करने के लिए उसे चार भागों में प्रस्तुत किया जा सकता है – (१) संकल्पी (२) उद्योगी (३) आरम्भी (४) विरोधी। निरपराध जीव को जानबूझकर मारना, सताना, दुख देना 'संकल्पी हिंसा' है। कृषि आदि कार्य-व्यापार में जो जीवन-निर्वाह के लिए किये जाते हैं जो जीवादि की हिंसा होती है उसे 'उद्योगी हिंसा' कहा जाता है। सावधान और सचेत रहने पर भी अनजाने में जो हिंसा की जाती है उसे 'आरम्भी हिंसा' कहते हैं। और जब 'स्व' या 'पर' की रक्षार्थ हिंसा की जाती है तब उसे 'विरोधी हिंसा' कहते हैं। भगवान महावीर ने साधुओं के लिए प्रत्येक प्रकार की हिंसा का निषेध और विरोध किया और गृहस्थ को संकल्पी का निषेध किया है।

अपरिग्रह (Non-Possession or Detachment) जिससे आत्मा सब प्रकार के बन्धन में पड़े वह परिग्रह है - 'परि-समन्तात आत्मानं गृहणातीति परिग्रहः'। परिग्रह से रहित व्यक्ति स्वाधीन और निर्भय रहता है – 'सव्वत्थ अप्पवसिओ णिस्संगो णिब्भओ य सव्वत्थ' वस्तुतः भीतर और बाहर की संपूर्ण ग्रन्थियों के उन्मोचन का नाम अपरिग्रह है। जो परिग्रह में फंसे हुए हैं वे वैर को बढ़ाते हैं 'परिग्गहनिविट्ठाणं वेरं तेसिं पवड्ढई'। वीतरागी मह[illegible] के प्रमुख प्रचेता थे उन्होंने संसार को अपरिग्रह का [illegible] प्रदान किया और कहा 'असंविभागी नह तस्स मोक्खो' अथ[illegible] [illegible]स-विभागी के लिए मोक्ष नहीं। असंविभाग का अर्थ है समान विभाजन, समान वितरण, न होना, इसी कारण तो समाज में वर्ग-वैषम्य को हवा मिलती है। अपरिग्रह ही समाज में समता की, एकता की भावना का उदय करता है। यही अपरिग्रह भौतिकता और आध्यात्मिकता के दो छोरों को मिलाने का काम करता है। अपरिग्रह दो प्रकार का होता है (१) आत्मगत (२) समाजगत। आत्मगत अपरिग्रह में ममत्व का विसर्जन नहीं होता, यहाँ मनुष्य का ध्यान 'स्व' पर अधिक केन्द्रित रहता है जबकि समाजगत अपरिग्रह में व्यक्ति 'स्व' की श्रृंखला

विच्छिन्न कर 'पर' तक सरलता से पहुँच जाता है, व्यामोह का विनाश हो जाता है, वह आत्मजी बन जाता है और अनासक्त भाव को आत्मसात् कर लेता है। अपरिग्रहवाद का लक्ष्य 'स्व' और 'ममत्व' का विसर्जन है, समाज में समानता की अनुभूति करना है। यों तो समाजवाद भी समानता की अनुभूति कराने वाली विचार धारा है परन्तु अपरिग्रहवाद और समाजवाद में एक मौलिक अन्तर है; समाजवाद में व्यक्ति यह सोचता है कि "मुझ से कोई बड़ा न हो" लेकिन अपरिग्रह में यह उदार भावना रहती है कि "मुझ से कोई छोटा न हो, जो कुछ मेरे पास है उस पर दूसरों का समान अधिकार हो"। आज जो मंहगाई द्रोपदी के चीर के समान अनन्त रूप में बढ़ती जा रही है, 'होडिंग' की कुवृत्ति और तज्जनित वस्तुओं का अभावजन्य दुख-संकट कितनी आपदाएँ और मुसीबतें पैदा कर रहा है यह किसी से ओझल नहीं। एतावत लाभ-लोभी, जमाखोर और वस्तुओं में खाने-पीने की चीजों में, दवाइयों तक में मिलावट करने वाले पापात्माओं को क्या कहें, उन्हें क्या शाप दें! उनकी बला से मिलावटी दवा का सेवन करने से, या मिलावटी खाद्य पदार्थों के भोग से किसी माँ की गोद सूनी हो जाये, किसी बहन का भाई मृत्यु को प्राप्त हो, किसी वधू की सुहाग छिन जाये। ऐसे परिग्रही व्यक्ति समाज द्रोही हैं, देश द्रोही हैं, मानवताद्रोही हैं, किंबहुना आत्मद्रोही हैं। लाभ के साथ-साथ लोभ भी बढ़ता है इस लाभ-लोभ की प्रवृत्ति का परित्याग करना ही होगा। इसके लिए किसी सरकारी आदेश या कानून की आवश्यकता नहीं, अपरिग्रह या समाजवाद सरकारी कानून या बिल पास करने से नहीं आयेगा, यह तो हृदय के लाभ-लोभ के विकार को दूर करने, हृदय की भावनाओं को संस्कृत परिष्कृत करने से आयेगा। क्या कानून किसी सूम को उदार, कायर को वीर, फजूलखर्ची को किफायतशार, क्रोधी को सहिष्णु, मूर्ख को विद्वान बना सकता है? नहीं, कदापि नहीं।

महावीर ने जीवन-निर्वाह के लिए धनार्जन की अवहेलना तो नहीं की, उसकी आवश्यकता का अनुभव कर उसे आवश्यकतानुसार प्राप्त करने को बुरा नहीं समझा। उन्होंने बुरा वहाँ समझा जहाँ अनावश्यक, अनुचित, असंगत, अन्यायपूर्ण, दूसरों के हाथ से छीनकर - उनके पेट पर लात मारकर धन-संग्रह किया जाता है, ऐसा धन विष

के समान है। यही बात 'उत्तराध्ययनसूत्र' —४ में कही गई है—

वित्तेणं ताण न लमे पमत्ते, इमम्मि लोह अदुवा परत्था।
दीवप्पणंट्ठेव अणंत मोहे, न माइय दटढ़ मद्दठेव ॥

चाहे मनुष्य की धन में तिजोरियाँ ही क्यों न भरी हों, फिर भ
उससे परितुष्ट नहीं हो पाता 'न वित्तेण तर्पणीयो मनुष्यः अनुभ
यह बात सिद्ध होती है कि शुद्धाचरण द्वारा धन-सम्पत्ति दि
परिवार के सदृश नहीं बढ़ती, वह सदैव अन्याय एवं अनुचित र
से ही बढ़ती है। नदी में जब सैलाब या बाढ़ आती है तब उस
से नहीं आती जो नदी के ऊपर बरसता है वरन् उस पानी से अ
जो गदे नालों से प्रचुरता के साथ, तीव्रता के साथ आकर न
मिलता है—

शुद्धधनैर्विवर्धन्ते सतामपि न सम्पदः।
न हि स्वच्छाम्बुभिः पूर्णाः कदाचिदपि सिन्धव ।।

परिग्रही व्यक्ति विकारों का भण्डार होता है, हिंसक, झूठा,
व्यभिचारी, वह हमेशा दूसरों का बुरा चाहता है. उसी में उसे
और संतोष मिलता है। परिग्रही व्यक्ति लोभी होता है—९९ के
में रहता है, लोभ में फंसा रहता है, क्या लोभ सकल अनर्थ
अनिष्टों का मूल नहीं—"लोभो मूलमनर्थानाम" यही कारण
आज लोभ-लाभ-वृत्ति और परिग्रहवाद ही भ्रष्टाचार, त
उत्कोच, हिंसा, भूखमरी के कशाघातों से मानवता को तड़पा र
परिग्रह तो नरक का द्वार है - "बह्व ... रकस्य
(तत्वार्थसूत्र, ६–१५)। परिग्रही स्वयं न ... और
इस कुवृत्ति से दूसरों को भी नारकीय ज... भागने को
करता है।

भगवान महावीर अपरिग्रह की साक्षात मूर्ति थे – निस्पृह
केतन, निर्वसन, क्या था उनके पास? राज-वैभव को ठुकराने
रेशमी और मखमली वस्त्रों को धारण करने वाला कमण्डल
पीछी लिए घूमता रहा, और वेश बस दिगम्बरत्व ही उसका
वस्त्र था। नगनत्व या दिगम्बरत्व में पूर्ण उत्सर्ग की भावना है
समझिए कि यह इस बात की ओर इंगित करता है कि हमें
कम वस्तुओं का संग्रह करना चाहिए। उनका वीतरागत्व अ
जन्य ही तो है। गांधी जी में यह वीतरागत्व था, वे अपरिग्र

आज मानवता का त्राण निष्परिग्रह में है परिग्रह में परीप्सा है। प्राप्त करने में आनंद नहीं, परित्याग में सन्निहित है। महावीर असंग्राहक प्रवृत्ति के उन्मेषक के रूप में चिर स्मरणीय हैं।

अनेकान्तवाद:—(Logic of Probability and Relativism। "अनेके अन्ताः धर्माः यस्मिन् स अनेकान्तः" अर्थात् अनेक धर्मों के कारण प्रत्येक वस्तु अनेकान्त रूप में विद्यमान है। एक ही पदार्थ में पाई जाने वाली विशेषताएं (या धर्म) नानारूप होती हैं, लेकिन है सत्य और यथार्थ। पदार्थों की अनेकविध विशेषताओं का सम्यक् या समन्वयमूलक प्रतिपादन का सिद्धान्त अनेकान्तवाद कहा जाता है। चाहे मटीरियल पदार्थ हो चाहे नॉन-मटीरियल पदार्थ हों; सभी जड़-चेतन पदार्थों में अनन्त गुण, धर्म, शक्तियां मौजूद हैं। पदार्थ चाहे छोटा हो, चाहे बड़ा हो, है वह अनन्त शक्ति-पुंज से संयुक्त। क्या सूक्ष्म, लघु एटम (परमाणु) अनन्त शक्ति-पुंज नहीं? परमाणु-शक्ति के द्वारा अज्ञात रहस्यों का अवनी अम्बर के सभी गुप्त रहस्यों का उद्घाटन किया जा रहा है चाहे बुद्धग्रह हो, चाहे चन्द्रलोक हो, चाहे भूगर्भ में छिपे अदृश्य परिवर्तन हों। एक एटम से क्षणभर में देश भर का विध्वंस किया जा सकता है। आज परमाणु-शक्ति के द्वारा रडार, बिजली घर आदि का संचालन सहजतः किया जा रहा है। कहने का अभिप्राय यह है कि सभी पदार्थ अनन्त गुण और विशेषताओं से आपूरित हैं और इन विशेषताओं को सापेक्षता में देखा जाता है, विभिन्न दृष्टिकोणों से परखा जाता है जैसे बिजली से जहां घर के, अन्दर-बाहर के अंधकार को नष्ट कर आलोक प्राप्त करते हैं, वहां बिजली का करन्ट लग जाने से मृत्यु भी हो जाती है। अग्नि से रसोई में तरह-तरह के व्यंजन तैयार किये जाते हैं, शीतकाल में उससे उष्णता प्राप्त होती है लेकिन वही अग्नि हमारे घर को जलाकर राख भी कर देती है।

अनेकान्तवाद अर्हद्दर्शन का निचोड़ है, यह एक ऐसी विचार-पद्धति है जो लोकाभिमुख है और सत्यावलम्बित है। इसे महावीर की सत्य-शोधित पद्धति या सत्य प्रकाशन शैली कहा जा सकता है। उन्होंने अनेकान्तवाद के द्वारा ही व्यष्टिपरक, समष्टिपरक जीवन की भौतिक, व्यावहारिक और आध्यात्मिक सभी प्रकार की समस्याओं का सम्यक्, अहिंसात्मक समाधान प्रस्तुत किया है। आज के इस बौद्धिक, तर्कप्रधान

के समान है। यही बात 'उत्तराध्ययनसूत्र' –४ में कही गई है –

वित्तेणं ताण न लभे पमत्ते, इमम्मि लोह अदुवा परत्था।

दीवप्पणंट्ठेव अणंत मोहे, न माइय दट्ठ मदट्ठेव ॥

चाहे मनुष्य की धन से तिजोरियाँ ही क्यों न भरी हों, फिर भी उससे परितुष्ट नहीं हो पाता 'न वित्तेण तर्पणीयो मनुष्यः अनुभ यह बात सिद्ध होती है कि शुद्धाचरण द्वारा धन-सम्पत्ति दि परिवार के सदृश नहीं बढ़ती, वह सदैव अन्याय एवं अनुचित र से ही बढ़ती है। नदी में जब सैलाब या बाढ़ आती है तब उस से नहीं आती जो नदी के ऊपर बरसता है वरन् उस पानी से आ जो गंदे नालों से प्रचुरता के साथ, तीव्रता के साथ आकर न मिलता है –

शुद्धधनैर्विवर्धन्ते सतामपि न सम्पदः ।

न हि स्वच्छाम्बुभिः पूर्णाः कदाचिदपि सिन्धव ॥

परिग्रही व्यक्ति विकारों का भण्डार होता है, हिंसक झूठा, व्यभिचारी, वह हमेशा दूसरों का बुरा चाहता है, उसी में उसे और संतोष मिलता है। परिग्रही व्यक्ति लोभी होता है—९९ के में रहता है, लोभ में फंसा रहता है, क्या लोभ सकल अनर्थ अनिष्टों का मूल नहीं—"लोभो मूलमनर्थानाम" यही कारण आज लोभ-लाभ-वृत्ति और परिग्रहवाद ही भ्रष्टाचार, त उत्कोच, हिंसा, भूखमरी के कशाघातों से मानवता को तड़पा र परिग्रह तो नरक का द्वार है – "बह्व रकस्य (तत्वार्थसूत्र, ६–१५)। परिग्रही स्वयं न है और इस कुवृत्ति से दूसरों को भी नारकीय जीवन भोगने को करता है।

भगवान महावीर अपरिग्रह की साक्षात मूर्ति थे – निस्पृह केतन, निर्वसन, क्या था उनके पास? राज-वैभव को ठुकराने रेशमी और मखमली वस्त्रों को धारण करने वाला कमण्डल पीछी लिए घूमता रहा, और वेश बस दिगम्बरत्व ही उसका वस्त्र था। नगनत्व या दिगम्बरत्व में पूर्ण उत्सर्ग की भावना है समझिए कि यह इस बात की ओर इंगित करता है कि हमें कम वस्तुओं का संग्रह करना चाहिए। उनका वीतरागत्व अ जन्य ही तो है। गांधी जी में यह वीतरागत्व था, वे अपरिग्र

आज मानवता का त्राण निष्परिग्रह में है परिग्रह में परीप्सा है। प्राप्त करने में आनंद नहीं, परित्याग में सन्निहित है। महावीर असंग्राहक प्रवृत्ति के उन्मेषक के रूप में चिर स्मरणीय हैं।

अनेकान्तवाद:—(Logic of Probability and Relativism। "अनेके अन्ता: धर्मा: यस्मिन् स अनेकान्त:" अर्थात् अनेक धर्मों के कारण प्रत्येक वस्तु अनेकान्त रूप में विद्यमान है। एक ही पदार्थ में पाई जाने वाली विशेषताएं (या धर्म) नानारूप होती हैं, लेकिन है सत्य और यथार्थ। पदार्थों की अनेकविध विशेषताओं का सम्यक् या समन्वयमूलक प्रतिपादन का सिद्धान्त अनेकान्तवाद कहा जाता है। चाहे मटीरियल पदार्थ हो चाहे नॉन-मटीरियल पदार्थ हों; सभी जड़-चेतन पदार्थों में अनन्त गुण, धर्म, शक्तियाँ मौजूद हैं। पदार्थ चाहे छोटा हो, चाहे बड़ा हो, है वह अनन्त शक्ति-पुंज से संयुक्त। क्या सूक्ष्म, लघु एटम (परमाणु) अनन्त शक्ति-पुंज नहीं? परमाणु-शक्ति के द्वारा अज्ञात रहस्यो का अवनी अम्बर के सभी गुप्त रहस्यों का उद्घाटन किया जा रहा है चाहे बुद्धग्रह हो, चाहे चन्द्रलोक हो, चाहे भूगभ में छिपे अदृश्य परिवर्तन हों। एक एटम से क्षणभर में देश भर का विध्वंस किया जा सकता है। आज परमाणु-शक्ति के द्वारा रडार, बिजली घर आदि का संचालन सहजत: किया जा रहा है। कहने का अभिप्राय यह है कि सभी पदार्थ अनन्त गुण और विशेषताओं से आपूरित हैं और इन विशेषताओं को सापेक्षता में देखा जाता है, विभिन्न दृष्टिकोणों से परखा जाता है जैसे बिजली से जहाँ घर के, अन्दर-बाहर के अंधकार को नष्ट कर आलोक प्राप्त करते हैं, वहाँ बिजली का करन्ट लग जाने से मृत्यु भी हो जाती है। अग्नि से रसोई में तरह-तरह के व्यजन तैयार किये जाते हैं, शीतकाल में उससे उष्णता प्राप्त होती है लेकिन वही अग्नि हमारे घर को जलाकर राख भी कर देती है।

अनेकान्तवाद अर्हद्दर्शन का निचोड़ है, यह एक ऐसी विचार-पद्धति है जो लोकाभिमुख है और सत्यावलम्बित है। इसे महावीर की सत्य-शोधित पद्धति या सत्य प्रकाशन शैली कहा जा सकता है। उन्होंने अनेकान्तवाद के द्वारा ही व्यष्टिपरक, समष्टिपरक जीवन की भौतिक, व्यावहारिक और आध्यात्मिक सभी प्रकार की समस्याओं का सम्यक्, अहिंसात्मक समाधान प्रस्तुत किया है। आज के इस बौद्धिक, तर्कप्रधान

युग में दुराग्रह सत्यान्वेषण के मार्ग में भारी अड़चन पैदा करता है। दुराग्रह की कुहेलिका विदीर्ण कर सत्यालोक की प्राप्ति तो अनकान्तवाद द्वारा ही संभव है। दुराग्रह अहंकारगर्भित होने कारण उपेक्षणीय एवं अग्राह्य हो जाता है, जबकि अनेकान्तवाद औदार्यगर्भित होने के कारण, सहिष्णुता से परिपूर्ण होने के कारण ग्राह्य है। अनेकान्त में तो वस्तुओं के, समस्याओं के अनेक अन्त हो सकते हैं, एक ही अन्त या निदान नहीं हो सकता। वह यही ध्वनित करता है। यह तो समदृष्टि का ही परिसूचक है उस समदृष्टि या समन्वयात्मक भावना का जो भारतीय संस्कृति की एक विशिष्टता है। महावीर का अनेकान्तवाद सभी प्रकार के अन्तर्विरोधों का उच्छेदन करने वाला है। उसमें लोकसंग्रह और समतावादी भावना का आधिक्य है, इसे हम सर्वधर्मसम्भाव का साकारित रूप कह सकते हैं। आज भारत में जो साम्प्रदायिकता एवं धर्मान्धता से सारा वातावरण विषाक्त हो रहा है, संसार का वायुमण्डल द्वन्द्व, संघर्ष, रक्तपात से दूषित, कलंकित और पर्याविल है, वह इसी कारण है कि मनुष्यों में अनेकान्तवादी दृष्टि का लोप हो गया है। नहीं तो क्या दो दशकों से वियतनाम और मध्यएशिया में आग उगलती तोपों के मुँह नहीं बन्द किये जा सकते थे जहां अब तक करोड़ों मनुष्यों के रक्त से भूमि रंगी पड़ी है, दिशाएं लाल हो रही हैं। आज यदि राष्ट्रीय एकता को सुदृढ़ करना है, भावात्मक एकता को मजबूत बनाना है सामाजिक, धार्मिक और भौतिक दृष्टि से समुन्नत होना है और विश्व को तृतीय महायुद्ध की विभीषिका से त्राण दिलाना है - सर्वनाश से बचाना है तो महावीर के अनेकान्त[illegible] करना होगा। उनकी इस मौलिक वैचारिक क्रान्ति [illegible] अंगीकार करना होगा, उनकी इस सांस्कृतिक अभिनव [illegible]। समझना होगा। महात्मा गांधी ने अनेकान्तवाद के विषय में सत्य ही कहा है; "इस सिद्धान्त ने मुझे यह बतलाया कि मुसलमान की जांच मुस्लिम-दृष्टिकोण से तथा ईसाई की परीक्षा ईसाई-दृष्टिकोण से की जानी चाहिए। पहले मैं मानता था कि मेरे विरोधी अज्ञान में हैं। आज मैं विरोधियों की दृष्टि से भी देख सकता हूँ। मेरा अनेकान्तवाद सत्य और अहिंसा इन युगल सिद्धान्तों का परिणाम है।"

'धम्मोवत्थुसहावो' वस्तु के स्वभाव को धर्म कहते हैं, प्रत्येक वस्तु अनेकधर्मा होती है, उसकी अनेक भूमिकाएं होती हैं उपयोगिता

की दृष्टि से उनमें भेद संलक्षित होते हैं जबकि अस्तित्व की दृष्टि से उनमें साम्य और ऐक्य है। वस्तु की एकरूपता का दुराग्रह त्याग कर उसकी अनेकरूपता का प्रतिपादन करना ही तो अनेकान्तवाद है। इस समय रात भी है और दिन भी है, देखने में विरोधाभास अवश्य लगेगा लेकिन समझने में इसकी सत्यता से मुँह नहीं मोड़ा जा सकता है जब लन्दन यदि रात के दो बजकर दस मिनट हुए हों तो दिल्ली में प्रातः के ६ बजकर ४० मिनट होते हैं। दिल्ली यमुना के पश्चिम में है तो यमुना दिल्ली के पूरब में भी है। सोना एक पदार्थ है लेकिन अंगूठी के रूप में, काँटो के रूप में, कंगन के रूप में, नेक्लेस के रूप में उसके गुण कई एक हैं, कई रूपों में उसकी उपयोगिता है। अंधे व्यक्तियों का हाथी के पैर, कान, सूंड, पूंछ, पेट पकड़कर उन्हीं अंगों को हाथी मानना भले ही पूर्ण सत्य न हो लेकिन वे हाथी के अंग हैं उनसे हाथी भिन्न तो नहीं, इसलिए सभी अंधे व्यक्ति सत्यांश के सन्निकट हैं। हमें प्रत्येक वस्तु को सापेक्ष दृष्टि से देखना होगा।

अनेकान्तवाद की कोई युगपत् परिभाषा सहज नहीं, यहाँ पहुँचकर भाषा जैसे मूक हो जाती है, शब्द जैसे पंगु हो जाते हैं। निष्कर्षतः अनेकान्तदर्शन के द्वारा महावीर ने विरोधी धर्मों, सन्तों के मध्य एक बुद्धिगम्य समन्वय स्थापित करने का श्रेयस्कर प्रयास किया। यह विचार-दर्शन आइन्स्टीन के सापेक्षवाद के अत्यधिक निकट है। अनेकान्तवाद को 'स्याद्वाद' की भाषा में अभिव्यंजित किया गया है। और 'स्यात्' शब्द अर्थ की दृष्टि से 'सापेक्ष्य' के ही तो निकट है। आइन्स्टीन के सत्य के दो पक्ष हैं (१) सापेक्ष्य सत्य (२) नित्य सत्य। उनके मतानुसार सापेक्ष्य सत्य ही बुद्धिगम्य है। महावीर का अनेकान्तवाद भी पूर्णतः सापेक्ष्य सत्य पर आधारित बुद्धिगम्य है।

अनेकान्तवाद को 'स्याद्वाद' की शैली में प्रस्तुत किया जाता है। 'स्यात्' शब्द 'शायद' का समानार्थी नहीं; 'शायद' में तो वस्तु का बराबर अनिश्चय बना रहता है, वस्तु की स्थिति संदेहास्पद बनी रहती है, जबकि स्याद्वाद में वस्तु की स्थिति का निश्चय रहता है। हाँ, यह वस्तु-स्थिति-निश्चय सापेक्ष होता है। इसके द्वारा हम सापेक्षता में सोचते हैं, पक्षपात में नहीं -

स्याद्वादो विद्यते यत्र, पक्षपातो न विद्यते।
अहिंसायाः प्रधानत्वं, जैनधर्मः स उच्यते॥

हम जितना जानते हैं उतना अभिव्यक्त नहीं कर पाते, कहने पर भी बहुत कुछ अनकहा रह जाता है—बस 'गूंगे के गुड़' वाली बात हो जाती है कि गूंगा जिस मिठास या मधुरता का अनुभव करता है उसका वर्णन नहीं कर पाता। वास्तव में अपूर्णता या अधूरेपन के अभाव को दूर करने के लिए ही 'स्यात' शब्द प्रयुक्त किया जाता है। यदि एक व्यक्ति के भिन्न-भिन्न पोजों में 'स्नेप' उठाये जायें तो यह सब फोटो भिन्न होकर भी 'स्यात्' यह ठीक हैं' स्यात् यह ठीक है' इस प्रकार देखने से रुचिकर, सन्तोष जनक और ग्राह्य होंगे। भिन्न-भिन्न अपेक्षाओं, दृष्किोणों या मनोवृत्तियों से जो एक ही तत्व के नाना दर्शन फलित होते हैं उन्हीं के आधार पर 'भगवाद' की सृष्टि खड़ी होती है। जिन दो दर्शनों के विषय ठीक-एक-दूसरे से बिल्कुल विरोधी जान पड़ते हों ऐसे दर्शनों का समन्वय बतलाने की दृष्टि से उनके विषयभूत भाव-अभावात्मक दोनों अंशों को लेकर उन पर जो सम्भावित वाक्य-भंग बनाए जाते हैं वही सप्तभंगी हैं', जिसका आधार नयवाद और ध्येय समन्वय है। 'भग' का अर्थ है भाग, लहर- प्रकार आदि। यहाँ 'भंग' से तात्पर्य वचन के उस प्रकार से है जा वस्तु का स्वरूप बताता है। इससे यह स्पष्ट होता है कि किसी भी पदार्थ के विषय में जो बात कही जा सकती है वह सात प्रकार से कही जा सकती है यही 'सप्तभंगी' विधि' है

स्यादस्ति स्वचतु[illegible]यादितः स्या[illegible]नास्त्यपेक्षाक्रमात्,
तव्यस्यादस्ति च नास्ति चेति युगपत् सा स्यादवक्तव्यता।
तद्वत् स्यात् पृथगस्ति नास्ति युगपत् स्यादस्तिनास्त्याह्निते.
वक्तव्ये गुणमुख्य भावनियतः स्यात् सप्तभ[illegible]

(श्रीपुर पार्श्व[illegible] [illegible]०)

अर्थात् सप्तभंगी' विधि इस रूप में है: (१) स्याद् अस्ति (२) स्याद् नास्ति (३) स्याद् अस्ति-नास्ति (४) स्याद् अवक्तव्य (५) स्याद् अस्ति-अवक्तव्य (६) स्याद् नास्ति-अवक्तव्य (७) स्याद् अस्ति-नास्ति अवक्तव्य। वास्तव में प्राचीन काल में आत्मा आदि के विषय में नित्यत्व अनित्यत्व, सत्व-असत्व, एकत्व-बहुत्व, व्यापकत्व-अव्यापकत्व आदि के आधार पर परस्पर विरोधी मत और वाद चल पड़े थे। इन्हीं भिन्न वादों और मतों को समन्वित करने के लिए 'सप्तभंग' की कल्पना की गई और सात से अधिक भंग सम्भव नहीं। इसी कारण सप्तभंग यानी सात की संख्या का हीं निर्धारण किया गया। सप्त-

भंगित्व पारस्परिक मत-वैभिन्नय का परिहार कर एक सर्वग्राह्य, बुद्धिगम्य सत्यानुगमिनी अभिव्यक्ति-शैली है। प्रो० आनन्द शंकर बाबू भाई ध्रुव ठीक ही कहते हैं "महावीर के सिद्धान्तों में बताये गये स्याद्वाद को कितने ही लोग संशयवाद कहते हैं, इसे मैं नहीं मानता। स्याद्वाद संशयवाद नहीं है, किन्तु वह एक दृष्टि-बिन्दु हमको उपलब्ध करा देता है। विश्व का किस रीति से अवलोकन करना चाहिए यह हमें सिखाता है। यह निश्चय है कि विविध दृष्टि-बिन्दुओं द्वारा निरीक्षण किये बिना कोई भी वस्तु संपूर्ण स्वरूप में आ नहीं सकती"।

महावीर और सामाजिक एकता: एल०पी० जैक्स ने कहा है कि "आज की दुनिया सम्पत्ति को सामाजिक बनाना चाहती है, राज्य सत्ता को सामाजिक बनाना चाहती है किन्तु मनुष्य को और उसके स्वभाव को सामाजिक बनाने की बात उसे नहीं सूझती।" महावीर को 'भगवान' और 'श्रमण' दोनों कहा जाता है। 'भगवान' अर्थात् अनन्तज्ञान शक्ति-सम्पन्न तो अन्य तीर्थंकर भी थे लेकिन 'श्रमण' केवल महावीर को ही कहा जाता है अन्य किसी तीर्थंकर को नहीं। उन्हें श्रमण इसलिए कहा जाता है कि उनके जीवन में — दर्शन में, वाणी में, व्यवहार में, तप में सर्वत्र — प्रत्येक स्थिति में श्रम की पराकाष्ठा रही। उन्होंने जीवन में सर्वदा तप, पुरुषार्थ, प्रयत्न, स्वावलम्बन को सबसे अधिक महत्व दिया। श्रमण या श्रम ही आध्यात्मिक स्तर पर 'तप' है। सात्विक श्रम ही तप है, तपश्चर्या है जैसा कि जैनाचार्य कहते हैं कि जो श्रम करता है, तपश्चर्या करता है, श्रम-तप की अग्नि में आत्मा को तपाता है वही श्रमण है। उन्होंने श्रमण' क्या 'महाश्रमण' होकर किसी की सेवा प्राप्त नहीं की, किसी पर निर्भर नहीं रहे। उन्होंने ऐसा श्रम-तप किया कि उसका स्मरण कर रोंगटे खड़े हो जाते हैं। यह माना कि वह आत्मवादी थे उनका धर्म आत्मधर्म था; लेकिन आत्मानुभव के पश्चात ही तो सामाजिक मूल्यों का अनुभव और सृजन किया जाता है। और जो आत्मवादी होगा वह कर्मवादी होगा, तथा जो कर्मवादी होगा वह लोकवादी भी अवश्य होगा। महावीर सच्चे अर्थों में लोकवादी थे, लोक संग्रह की भावना से ओतप्रोत थे।

ज्ञातपुत्र महावीर ने अणुव्रती सम्यकत्व को प्राप्त समाज का वह स्वरूप प्रस्तुत किया जो सर्वविध सौख्यकारक है। उन्होंने जन्म या

कुल या जाति के आधार पर किसी को बड़ा या छोटा नहीं माना, जाति ऊंच-नीच का मानदण्ड नहीं हो सकती "गुणाः पूजा स्थान गुणिषु न च लिंग न च वय:"। गुण से आदमी बड़ा माना जाता है, जाति से नहीं। पशुओं में गाय, बैल, घोड़ा, गधा, शेर, बकरी, बाज, गज आदि भेद भले ही पशु-जगत् हम स्वीकार करलें लेकिन मनुष्य के ब्राह्मण, वैश्य, शूद्र, भंगी, जाट, तेली आदि भेद न मान्य हैं, न उचित हैं। ऐसा भेद-भाव वर्ग-वैषम्य समाज को खोखला बनाता है, उसकी एकता को भंग करता है, दुःख द्वन्द्व बढ़ाता है, देश की शक्ति को कमजोर करता है। इसीलिए महावीर ने सबको समान आदर प्रदान किया और घोषणा की "हे आसुवो, अपनी स्वतंत्रता के समान सबकी स्वतंत्रता का अनुभव करो, जब कोई व्यक्ति किसी अन्य वस्तु को अपने अधिकार में करने में समर्थ नहीं होता स्वयं अपनी इच्छाओं का दास बन जाता है"। इस प्रकार उन्होंने जनतन्त्र की नयी व्याख्या प्रस्तुत की; उस समय कल्याणमय राज्य मानव के कल्याण तक ही सिमटा हुआ था। महावीर ने प्राणियों के हित तक उसका विस्तार किया - पशु-पक्षियों के कल्याण को भी राज्य के कर्तव्य में सम्मिलित किया। उन्होंने इस प्रकार स्वतंत्रता और समानता दोनों जीवन-मूल्यों को जीवन-पद्धति में शामिल किया। अंग्रेजी के प्रसिद्ध कवि कॉलरिज की शब्दावली में 'उत्तम उपासक वह है जो मनुष्य, पशु पक्षी सबसे एक समान प्रेम करता है। सर्वोत्तम उपासक वह है जो छोटे-बड़े समस्त पदार्थों से एक समान प्रेम करता है।" भगवान महावीर ऐसे ही सर्वोत्तम उपासक और प्रेमी थे। उन्होंने मनुष्य और [illegible] समान प्रेम किया। उनके 'समवशरण' के द्वार हर [illegible] खुले थे, स्त्री-पुरुष, बाल-वृद्ध, पशु-पक्षी किसी का भी प्रवेश [illegible] नहीं था। उनकी धार्मिकता दिखाने की नहीं अनुभव करने की, आत्म-सात करने की चीज थी। उन्होंने हरिकेशी जैसे अस्पृश्य को गले लगाकर मानवता की प्रेम की सद्भावना की भावात्मक एकता की अभिनव गंगा प्रवाहित कर दी। उन्होंने अपने धर्म को श्रेष्ठ और अन्य धर्म को हीन या निंद्य नहीं माना। उन्होंने मनुष्यों को उनकी लोकप्रचलित जन-भाषा में उपदेश देकर भी समानता का प्रतिपादन किया। जनता की भाषा में भावाभिव्यक्ति ही तो जनतांत्रिक दृष्टि है। उन्होंने निष्परिग्रहवाद के द्वारा सामाजिक स्तर पर आर्थिक विषमता

को नष्ट किया। परिग्रह या आर्थिक विषमता से समाज में कटुता, मनमुटाव, ईर्ष्या, द्वेष, घृणा, अहंकार, हिंसा बढ़ती है, समाज में अशांति उत्पन्न होती है इसलिए उन्होंने अपरिग्रह का उपदेश देकर आर्थिक विषमता को, धन के प्रति तृष्णा को कम किया। उन्होंने मनुष्य की, नारी की खोई हुई प्रतिष्ठा को पुनः जीवित किया। अहिंसा और अपरिग्रह के पुरस्कर्ता के रूप में उन्होने चिन्तन में समन्वय, व्यवहार में सर्वोदय के ही शिवमय उद्‌गार प्रकट किये। "'वीर' प्रताप विषमता खोई" (तुलसी की पंक्ति में परिवर्तन के साथ)—महावीर ने सामाजिक, जातीय विषमता का विनाश कर सामाजिक एकता का वह बीजारोपण किया जो आज वटवृक्ष के रूप राजनीतिक मंच तक अपनी शाखाएं फैला रहा है, अर्थात् राजनेता भी सामाजिक, जातीय एकता की बात कहने लगे हैं, बल्कि तदनुकूल आचरण कर रहे हैं।

महावीर और नारी जागरण: भगवान महावीर का व्यक्तित्व क्रान्तदर्शी था; उन्होंने जीवन के प्रत्येक पहलू को अपना क्रान्तिमय चेतना से प्रभावित एवं उत्प्रेरित किया। उनका युग नारी के महापतन का युग था। अन्य पदार्थों के समान उसका भी परिग्रह किया जाता था। वह भोग्य-वैलाम्य-सामग्री थी; क्रीतदासी, वेश्या गणिका के रूप में ही उसे अधिक मान प्राप्त था। चन्दना का सरे बाजार नीलाम किया जाना इसका स्पष्ट प्रमाण है। महावीर नारी की इस अधम, पतित, अवमानित दशा का अनुभव कर व्याकुल हो उठे। उन्होंने नारी को 'धम्म सहाया' कहकर, धर्म की सहायिका मानकर आदर प्रदान किया, गौरवान्वित किया। यही नहीं उन्होंने स्पष्ट रूप में घोषित किया कि 'सत्पुरुष वह है जो शीलवती पत्नी का हित करे।' बस फिर क्या था उनकी वाणी ने मंत्र जैसा प्रभाव दिखलाया। नारी का खाली आँचल मान-सम्पदा से भर गया, उसका सिर आदर और गौरव की आभा से भासमान हो उठा। घृणा, प्रत्याख्यान वासना, कामुकता, भरी दमघोटू कालकोठरी से उसे मुक्ति मिली। उसे परिव्राजिका का पूर्ण आदर-सम्मान प्राप्त हुआ। सती प्रथा बन्द कर नारी पर किये जाने वाले समाज के अमानुषिक व्यवहार और नृशंस अत्याचार से उसे छुटकारा मिला। विधवा स्त्री को पूर्ण आदर प्रदान कर उसके वैधव्य को निष्कलंकित घोषित किया गया और उसे

भी समाज में समान आदर और प्रतिष्ठा दी गई। भगवान महावीर ने नारी जगत में वह क्रान्ति उत्पन्न की वह जाग्रति उत्पन्न की कि नारियाँ एक बड़ी संख्या में उनके बृहद् संघ में जौक़-दर-जौक़ शामिल होने लगीं। जहाँ इन्द्रभूति जैसे प्रमुख गणधर भिक्षु संघ का नेतृत्व करते थे, वहाँ चन्दन वाला जैसी विदुषी नारी भिक्षुणी संघ का नेतृत्व संभालती थी। उनके संघ में ३६,००० भिक्षुणियाँ और १८,००० श्राविकाएँ सम्मिलित थीं। आज नारी जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में उत्साह और साफल्य के साथ अग्रसर हो रही है इस जाग्रति का उत्प्रेरक स्रोत महावीर ही थे। जैनधर्म में अब भी पूज्या साध्वी श्री कनक प्रभा जी, साध्वी श्री मृगावती जी, आर्यिका श्री ज्ञानमाता जी आदि विदूषी साध्वियाँ हैं। आज दुख इसे देखकर होता है कि आधुनिक नारियाँ पश्चिम की चकाचौंध से अपने भारतीय संस्कृति के, रास्त से भटक गईं हैं। इसी कारण तो हमारी सतान भी, नयी पीढ़ी भी पथभ्रष्ट हो रही है।

अंतिम तीर्थंकर शलाकापुरुष महावीर का सम्पूर्ण जीवन एक 'आइडियोलोजी' है। भारतीय संस्कृति के उन महापुरुषों में वह अग्रगण्य हैं। जिन्होंने अपने आध्यात्मिक चिंतन से मानव-जीवन को आन्दोलित तथा प्रभावित किया। आज व्यक्ति के अनेकविध व्यक्तित्व, अभिमान और आत्यन्तिक आग्रह के कारण सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक स्तर पर समस्याओं का विषम जाल फैला हुआ है। भौतिक ऐश्वर्य की चकाचौंध से मनुष्य सम्यकत्व की ओर नहीं देख पा रहा है। इस प्रकार की विषम परिस्थितियों से महावीर के सद उपदेश, उनका अनेकान्तवाद और स्यद्वाद का सिद्धान्त उबार कर विश्व [illegible] स्वप्न को रूपायित कर सकता है। अहिंसा तथा अपरिग्र[illegible] से हम भौतिक ऐश्वर्य और आध्यात्मिक वैभव में सामंज[illegible] कर मानव-जीवन को सुख-सम्पन्न, समुत्कृष्ट बना सकते हैं।

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आयरियाणं,

णमो उव्वज्जभायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं

युग पुरुष अरिहंतों, सिद्धों को, ज्ञान-प्रदाता उपाध्याय, आचार्यों, सन्तों, साधु-जनों को मेरा सादर नमन समर्पित।

———

भगवान महावीर और जैन धर्म: जैनेतर विद्वानों की दृष्टि में :-

क- पाश्चात्य विद्वान

प्रो० डा० वाल्टर शूब्रिंग (जर्मनी) :-

"संसार सागर में डूबते हुए मानवों ने अपने उद्धार के लिए पुकारा इसका उत्तर श्री महावीर ने जीव के उद्धार का मार्ग बतलाकर दिया। दुनिया में ऐक्य और शांति चाहने वालों का ध्यान महावीर की उदार शिक्षा की ओर आकृष्ट हुये बिना नहीं रह सकता।"

प्रो० डा० हेल्मुथ फोन ग्लाजेनाप्प (जर्मनी) :—

"निःसंदेह भगवान महावीर एक महापुरुष थे। उनके समकालीन मानवों पर उनके मानसिक एवं आध्यात्मिक उपदेशों का गम्भीर प्रभाव पड़ा था। अपने समय के सभी ज्वलंत प्रश्नों पर उन्होंने प्रबल और गम्भीर विचार करके ठीक समाधान किया था। उनके आस-पास की परिस्थिति को स्पष्ट विश्लेषित और निराकृत करने के लिए उस समय उनकी बड़ी आवश्यकता थी"।

प्रो० डा० लुई रिनाउ (पेरिस) :—

"तीर्थंकरों की मान्यता अत्यन्त प्राचीन है जैसा कि मथुरा के पुरातत्व से सिद्ध है। × × महावीर जो इस परम्परा में अन्तिम रहे एक महान प्रचारक थे जिन्होंने अनेक अनुयायियों को आकर्षित किया।"

डा० अल्बर्ट पाग्गी, (जिनोवा, इटली) :-

"महावीर की शिक्षाएँ ऐसी प्रतीत होती हैं, मानो विजय आत्मा का विजय ज्ञान हो, जिसने अन्ततः इसी लोक में स्वाधीनता और जीवन पा लिया हो। सहस्त्रों व्यक्ति उनकी ओर अपलक देख रहे हैं। उनकी वैसी ही शांति और पवित्रता की चाह है।"

हरबर्ट वॉरेन (लन्दन) :—

"भगवान महावीर ने सर्वांगीण सत्य, सम्पूर्ण नैतिक शुचिता एवं अखण्ड ब्रह्मचर्य का जीवन व्यतीत किया जो सभी जीवों को अभयदान देता है। वे बिना किसी सम्पत्ति या परिग्रह यहाँ तक कि शरीर ढकने के लिए वस्त्रों के बिना ही इस संसार में रहे। उन्हें कैवल्य ज्ञान प्राप्त हुआ, वे पूर्णतः सुखी थे, उन्होंने अपने अमरत्व का भी भान किया। जो व्यक्ति दुखों से मुक्ति चाहते हैं उनके लिए उनका जीवन ज्वलन्त उदाहरण है।"

श्रीमती [illegible] :—

"महावीर स्वामी ने शब्दों में ही नहीं अपितु रचनात्मक जीवन में एक महान आन्दोलन किया, वह आन्दोलन जो नवीन और सम्पूर्ण जीवन को लाने के लिए नव आशा का स्त्रोत था जिसे हम धर्म कह रहे हैं।"

डा० एच. [illegible], एमस्टरडम (हॉलैण्ड) :—

"अन्तिम तीर्थंकर भगवान महावीर विषयक चिन्तन हमें प्राचीन भारतीय संस्कृति के मूलाधारों या साधारणतः समग्र मानवी संस्कृति के सम्पर्क में लाता है क्योंकि अहिंसा का सिद्धान्त, सब पशुओं, मनुष्य एवं जीवों के प्रति दया जिसकी साहित्यिक व्याख्या छदोग्योगोपनिषद् के एक रहस्यमय खण्ड में मिलती है, उनके लिए जीवन का एक यथार्थ सत्य था। × × भगवान महावीर की श्रेष्ठ शिक्षाएँ मोक्ष-मार्ग का निर्देश करती हैं। आज भी वे उतनी ही कल्याणकारी, अनुकरणीय हैं जितनी कि वे कभी थीं।"

डा० अर्नेस्ट लायमेन :-

"भगवान महावीर अलौकिक पुरुष थे। वह तपस्वियों में श्रेष्ठ, विचारकों में महान, आत्मविकास में अग्रसर दर्शनकार और उस समय की प्रचलित सभी विद्याओं में पारंगत थे। उन्होने अपनी तपस्या के बल से उन विद्याओं को रचनात्मक रूप देकर जनसमूह के समक्ष उपस्थित किया था।"

बर्ट्रेण्ड रसेल :-

"संसार में सभी व्यक्ति युद्ध चाहते हैं पर एक महावीर ही उसके विरोध में थे। जैन धर्म तो यह सीख देता है कि अहिंसा और सच्चरित्र ही जीवन में श्रेष्ठ हैं।"

ख- भारतीय विद्वान

महात्मा गाँधी :

"मेरा अनुभव है कि अपनी दृष्टि से मैं सदा सत्य ही होता हूँ, किन्तु मेरे ईमानदार आलोचक तब भी मुझ में गलती देखते हैं। पहले मैं अपने को सही और उन्हें अज्ञानी मान लेता था, किन्तु अब मैं मानता हूँ कि अपनी-अपनी जगह हम दोनों ठीक हैं, कई अंधों ने हाथी को अलग-अलग टटोलकर उसका जो वर्णन किया था वह दृष्टान्त अनेकान्तवाद का सबसे अच्छा उदाहरण है। इसी सिद्धान्त ने मुझे यह बतलाया है कि मुसलमान की जाँच मुस्लिम दृष्टिकोण से तथा ईसाई की परीक्षा ईसाई दृष्टिकोण से की जानी चाहिए। पहले मैं मानता था कि मेरे विरोधी अज्ञान में हैं। आज मैं विरोधियों की दृष्टि से भी देख सकता हूँ। मेरा अनेकान्तवाद सत्य और अहिंसा-इन युगल सिद्धान्तों का ही परिणाम है।"

पं० महावीर प्रसाद द्विवेदी :—

"प्राचीन दर्जे के हिन्दु धर्मावलम्बी बड़े-बड़े शास्त्री तक अब भी नहीं जानते कि जैनियों का स्याद्वाद किस चिड़िया का नाम है। धन्यवाद है जर्मनी, फ्रांस और इग्लेंड के कुछ विद्यानुरागी विशेषज्ञों को जिनकी कृपा से इस धर्म के अनुयायियों के कीर्ति-कलाप की खोज की ओर भारतवर्ष के इतर जनों का ध्यान आकृष्ट हुआ। यदि ये विदेशी विद्वान जैनों के धर्म-ग्रन्थो की आलोचना न करते, उनके प्राचीन लेखकों की महत्ता प्रगट न करते तो हम लोग शायद आज भी पूर्ववत् अज्ञान के अन्धकार में डूबे रहते।"

श्री काका कालेलकर :—

"मैं स्वयं सनातनी हिन्दू होने से जैन समाज को सलाह देने का अपना विशेष अधिकार नहीं मान सकता फिर भी इतना कहूँगा······ जो जैन-संस्कृति और जैन-धर्म मूल में सारे विश्व में फैलाने लायक थे, उन्होंने हिन्दुस्तान की सनातन संस्कृति की रूढ़िवादी संस्था का ही स्वरूप ले लिया है। × × और जो व्यापक, सार्वभौम, मौलिक प्रधान जैन दृष्टि हमने अलग की है उसका प्रचार सारी दुनिया के भिन्न-भिन्न देशों में जोरों से किया जा सकता है। फिर वहाँ के लोग अपनी-

अपनी दृढ़ संस्कृति के अनुकूल सार्वभौम जैन धर्म की स्वदेशी आवृत्ति तैयार करें उन्हें ऐसी छूट होनी चाहिए।"

डा० सम्पूर्णानन्द :–

"अनेकान्तवाद या सप्तभंगीन्याय जैन-दर्शन का मुख्य सिद्धान्त है। प्रत्येक पदार्थ के जो सात अन्त या स्वरूप जैन शास्त्रों में कहे गये हैं, उनको ठीक प्रकार से स्वीकार करने में आपत्ति हो सकती है। कुछ विद्वान भी सात में कुछ को गौण मानते हैं। साधारण मनुष्य को वह समझने में कठिनाई होती है कि एक ही वस्तु के लिए एक ही समय में है और नहीं है, दोनों बातें कैसे कही जा सकती है, परन्तु कठिनाई के होते हुए भी वस्तुस्थिति तो ऐसी ही है"।

विश्वकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर : -

"महावीर स्वामी ने भारत में ऐसा संदेश फैलाया कि धर्म केवल सामाजिक रूढ़ियो के पालन करने में नहीं, किन्तु सत्य धर्म का आश्रय लेने से मिलता है। धर्म में मनुष्य के प्रति कोई स्थायी भेदभाव नहीं रह सकता। कहते हुए आश्चर्य होता है कि महावीर की इस शिक्षा ने समाज के हृदय में जड़ जमाकर बैठी हुई इस भेद-भावना को बहुत शीघ्र नष्ट कर दिया और देश को अपने वश में कर लिया।"

राजगोपालाचार्य :–

"भगवान महावीर का संदेश किसी खास कौम या फ़िरके के लिए नहीं है वल्कि समस्त संसार के लिए है। अगर
स्वामी के उपदेश के अनुसार चले तो वह अपने जी
बनाले। संसार में सुख और शाँति इसी सूरत में प्राप्त हा ... .. ह, जबकि हम उसके बताए हुए मार्ग पर चलें।"

डा० गंगानाथ झा :–

"जब से मैंने शंकराचार्य द्वारा जैन सिद्धान्त का खण्डन पढ़ा है तब से मुझे विश्वास हुआ कि इस सिद्धान्त में बहुत कुछ है जिसे वेदान्त के आचार्य ने नहीं समझा और जो कुछ अब तक जैनधर्म को जान सका हूँ उससे मेरा दृढ़ विश्वास हुआ है कि यदि वे जैनधर्म को उसके मूल ग्रन्थों से देखने का कष्ट उठाते तो उन्हें जैन धर्म का विरोध करने की कोई बात नहीं मिलती।"

अनंतशयनम् अय्यंगार :—

"भारत के महान संतों जैसे जैनधर्म के तीर्थंकर ऋषभदेव व भगवान महावीर के उपदेशों को हमें पढ़ना चाहिए। आज उन्हें अपने जीवन में उतारने का सबके ठीक समय आ पहुँचा; क्योंकि जैन-धर्म का तत्वज्ञान अनेकान्त पर आधृत है और जैनधर्म का आचार अहिंसा पर प्रतिष्ठापित है। जैनधर्म कोई पारस्परिक विचारों, ऐहिक व परलौकिक मान्यताओं पर अन्ध श्रद्धा रखकर चलने वाला सम्प्र-दाय नहीं है, वह मूलतः एक विशुद्ध वैज्ञानिक धर्म है। उसका विकास एवं प्रसार वैज्ञानिक ढंग से हुआ है क्योंकि जैनधर्म का भौतिक विज्ञान और आत्मविद्या का क्रमिक अन्वेषण आधुनिक विज्ञान के सिद्धान्तों से समानता रखता है। जैनधर्म ने विज्ञान के उन सभी प्रमुख सिद्धान्तों का विस्तृत वर्णन किया है। जैसा कि पदार्थ-विद्या, प्राणिशास्त्र, मनो-विज्ञान और काल, गति-स्थिति, आकाश एवं तत्वानुसंधान।"

डॉ० बलदेव उपाध्याय :—

"उपनिषदों में किसी एक ही मत के प्रतिपादन की बात (एकान्त) ऐतिहासिक दृष्टि से नितान्त हेय है, उनकी समता तो उस ज्ञान के मानसरोवर (अनेकान्त) से है जहाँ से भिन्न-भिन्न धार्मिक तथा दार्शनिक धाराएँ निकलकर इस भारतभूमि को आप्यायित करती आई हैं। इस धारा (स्याद्वाद) को अग्रसर करने में ही जैनधर्म का महत्व है। इस धर्म का आचरण सदा प्रत्येक जीव का कर्तव्य है।"

डा० सर्वपल्ली राधाकृष्णन् :—

"मानव-जाति के इन महापुरुषों में से एक हैं महावीर। उन्हें 'जिन' अर्थात् विजेता कहा गया है। उन्होंने राज्य और साम्राज्य नहीं जीते, अपितु आत्मा को जीता। सो उन्हें 'महावीर' कहा गया है - सांसारिक युद्धों का नहीं अपितु आत्मिक संग्रामों का महावीर। तप, संयम, आत्म-शुद्धि और विवेक की अनवरत प्रक्रिया से उन्होंने अपना उत्थान करके दिव्य पुरुष का पद प्राप्त कर लिया। × × इस तरह, संयम की आवश्यकता, अहिंसा और दूसरे के दृष्टिकोण एवं विचार के प्रति सहिष्णुता और समझ का भाव—ये उन शिक्षाओं में से कुछ हैं जो महावीर के जीवन से हम ले सकते हैं।"

डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी :—

जिन तप पूत महात्माओं पर भारतवर्ष उचित गर्व कर सकता है, जिनके महान उपदेश हजारों वर्ष की कालावधि को चीर कर आज भी जीवंत प्रेरणा का स्रोत बने हुए हैं, उनमें भगवान महावीर अग्रगण्य हैं। उनके पुण्य स्मरण से हम निश्चित रूप से गौरवान्वित होते हैं। ×× मुझे भगवान महावीर के इस अनाग्रही रूप में जो सर्वत्र-सत्य की झलक देखने का प्रयासी है, परवर्ती काल के अधिकारी-भेद, प्रसंग-भेद आदि के द्वारा सत्य को सर्वत्र देखने की वैष्णव प्रवृत्ति का पूर्वरूप दिखायी देता है। कभी-कभी उन्हें जैनमत के उस रूप को जो आज जीवित है, प्रभावित और प्रेरित करने वाला मानकर उनकी देन को सीमित कर दिया जाता है। भगवान महावीर इस देश के उन गिने-चुने महात्माओं में से हैं जिन्होंने सारे देश की मनीषिका को नया मोड़ दिया है। उनका चरित्र, शील, तप और विवेकपूर्ण विचार सभी अभिनंदनीय हैं।

प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी :

उन्होंने महावीर को महाविजेता' मानते हुए कहा कि भगवान महावीर ने सिखाया कि अपने से लड़ो, दूसरों से नहीं। अपने अन्तस् को टटोलो दूसरों को नहीं,। आत्मविजय प्राप्त करें द्वेष से नहीं, दोस्ती से; हिंसा से नहीं, अहिंसा से। दूसरे धर्म भी उतने ही सत्य हैं जितना कि अपना। भगवान महावीर ने हमें यही सिखाया और भारतीय संस्कृति को हमेशा से यही सबसे बड़ी देन रही सहना यानी सहिष्णुता।

महावीर की उपदेश-मंजरी

卐 धम्मेण होदि पुज्जो।
धर्म से प्राणी पूज्य होता है।

卐 देवा वि तं नमस्संति, जस्स धम्मे सदा मणो।
देवता भी धर्मात्मा व्यक्ति को नमस्कार करते हैं।

卐 चत्तारि धम्मदारा—खंती, मुत्ती, अज्जवे, मद्दवे।
धर्म के चार द्वार हैं-क्षमा, संतोष, सरलता, और विनय।

卐 धम्मं आयरह सया पावं दूरेण परिहरह।
धर्माचरण में प्रवृत्त रहो और पापाचरण से दूर रहो।

卐 सुचिण्णा कम्मा सुचिण्णफला भवंति।
अच्छे कर्मों का फल अच्छा होता है।

卐 विसोहि-मूलाणि पुण्णाणि।
पुण्यकर्म का मूल आत्म सुद्धि है।

卐 सीलं मोक्खस्स सोपाणं।
ब्रह्मचर्य मोक्ष की सीढ़ी है।

卐 चरणं हवइ सधम्मो, धम्मो सो हवइ अप्पसमभावो।
चरित्र धर्म है, यह धर्म आत्मा का साम्यभाव है।

卐 णाणं णरस्स सारो। णाणुज्जोवस्स णात्थि पडिघादो!
ज्ञान मनुष्य का सार है, ज्ञान के प्रकाश को कोई नष्ट नहीं कर सकता।

卐 मेहाविणो लोभभयावईया, संतोपिणो ण पकरेंति पावं।
कामना और भय से अतीत होकर यथा लाभ संतुष्ट रहने वाले मेधावी पाप नहीं करते।

卐 भोगी भमइ संसारे अभोगी विप्पमुच्चई।
भोगी जन्म-मरण के चक्र से नहीं छूटता, अभोगी मुक्त हो जाता है।

卐 जह ते ण पियं दुक्खं, तहेव तेसिंपि जाण जीवाणं।
जैसे तुझे दुःख प्रिय नहीं है, वैसे अन्य जीवों के विषय में भी समझो।

卐 अविस्सासो य भूयाणं, तम्हा मोसं विवज्जए।
झूठ बोलने वाला सभी लोगों का विश्वास खो बैठता है, इसलिए असत्य भाषण करना उचित नहीं।

卐 णाया वीरा महावीहिं।
वीर पुरुष महामार्ग की ओर अग्रसर होते हैं।

卐 विसए विरत्तचित्तो जोई जाणेइ अप्पाणं।
विषयों से विरक्त चित्त वाला योगी आत्मा को जान लेता है।

卐 अप्पो विय परमप्पो कम्मविमुक्को य होइ फुडं।
कर्मविमुक्त आत्मा ही परमात्मा है।

卐 रत्तो बंधदि कम्मं मुच्चदि कम्मेहिं रागरहिदप्पा।
राग से व्यक्ति कर्मों को बाँधता है, राग-रहित हो कर्मों से छूटता है।

卐 हिंडंति चाउरंगं विसएसु विमोहिया मूढा।
सांसारिक विषयों में आसक्त मूढात्मा चतुर्गति रूप संसार में भटकता रहता है।

卐 भवकोडी-संचियं कम्मं तवसा निज्जरिज्जइ।
जैसे तालाब का जल सूर्य-ताप से अथवा उलीचने से रिक्त हो जाता है वैसे ही तप के द्वारा करोडों भवों के कर्म नष्ट हो जाते हैं।

卐 असच्चमोसं सच्चं च अणवज्जमक्कसं
समुप्पेहमसं दिद्धं गिरं भासेज्ज पन्नवं।
बुद्धिमान को ऐसी भाषा बोलनी चाहिए जो व्य[illegible],
तथा निश्चय में भी सत्य हो, निरवद्य हो, अकर्कश[illegible]त-
कारी हो तथा असंदिग्ध हो।

卐 अब्भंतरबाहिरए सव्वे गंथे तुमं विवज्जेहि।
भीतर और बाहर की सम्पूर्ण ग्रंथियों के उन्मोचन का नाम अपरिग्रह है।

卐 सव्वत्थ अप्पवांसओ णिस्संगो णिब्भओ य सव्वत्थ।
परिग्रह से रहित व्यक्ति स्वाधीन और निर्भय रहता है।

卐 परिग्गहनिविट्ठाणं वेरं तेसिं पवड्ढई।
जो परिग्रह में फंसे हुए हैं, वे वैर को ही बढ़ाते हैं।

卐 वित्तेण ताणं न लभे पमत्ते।
मनुष्य धन से अपनी रक्षा नही कर सकता।

卐 कामे कमाही कमियं खु दुक्खं
कामनाओं को दूर करना ही वास्तव में दुःखों को दूर करना है।

卐 इच्छा, मुच्छा, तण्हा, गेहि असंजमो, कंखा।
हत्थलहुत्तणं परहडं तेणिक्क कूडया अदत्तं॥
परधन की इच्छा, मूर्च्छा, तृष्णा, गृद्धि, असंयम, कांक्षा, हस्तलाघव (हाथ की सफ़ाई) परधन-हरण, कूट-तोल माप और बिना दी हुई वस्तु लेना—ये सब कृत्य चोरी है।

卐 वरं मे अप्पा दंतो संजमेण तवेण य।
माहं परेहि दम्मंतो बंधणेहि वहेहि य॥
संयम और तप द्वारा मैं स्वयं अपना दमन-अनुशासन करूँ, यही श्रेष्ठ मार्ग है। अन्यथा ऐसा न हो कि दूसरे वध एवं बंधन द्वारा मुझ पर अनुशासन करें मेरा दमन करें।

卐 न लोगस्सेसणं चरे। जस्स नत्थि इमा जाई अण्णा तस्स कओ सिया।
लोकैषणा से मुक्त रहना चाहिए। जिसको यह लोकैषणा नहीं है, उसको अन्य पाप-प्रवृत्तियाँ कैसे हो सकती है?

卐 न य बाहिर परिभवे, अत्ताणं न समुक्कसे।
सुयलाभे न मज्जेज्जा, जच्चा तवसि बुद्धिए॥
विवेकी पुरुष दूसरे का तिरस्कार न करे, न अपनी बड़ाई करे। और न ही अपने शास्त्र-ज्ञान, जाति और तप का अभिमान करे।

卐 तवरहियं जं णाणं णाणविजुत्तो तवो वि अकयत्थो।
तम्हा णाणतवेण संजुत्तो लहइ णिव्वाणं।
जो ज्ञान तप से रहित है, वह व्यर्थ है, और जो तप ज्ञान से रहित है, वह भी व्यर्थ है। इसलिए ज्ञान और तप से युक्त पुरुष ही मोक्ष को प्राप्त करता है।

卐 वयं च वित्तिं लब्भामो, न य कोइ उवहम्मइ।
कष्ट न हो औरों को ऐसे जियें, जीवन-रस बांटे सबको, खुद पियें।

卐 गाहेण अप्प गाहा, समुद्दसलिले सचेल-अत्थेण।
सागर में अथाह जल होता है लेकिन वस्त्र धोने के लिए थोड़ा ही जल ग्रहण किया जाता है। उसी प्रकार उपलब्ध वस्तुओं में से आवश्यकतानुसार ही ग्रहण करना श्रेयस्कर है।

卐 लाभुत्ति न मज्जिज्जा, अलाभुत्ति न सोइज्जा।
बहुं पि लद्धुं न निहे, परिग्गहाओ अप्पाणं अवसक्किज्जा।

धन मिलने पर न गर्व करो, धन न मिलने पर न शोक करो, यदि अधिक मिल जाये तो उसका संचय नहीं करना चाहिए, क्योंकि परिग्रह वृत्ति सुखकर नहीं।

卐 मयमाय कोहरहिओ लोहेण विवज्जिओ य जो जीवो।
णिम्मलसहावजुत्तो सो पावइ उत्तमं सुखं ॥

जो जीव मद, माया, क्रोध व लोभ से रहित है तथा जो निर्मल स्वभाव वाला है, वह उत्तम सुख को प्राप्त करता है।

卐 तिणकट्ठेण व अग्गि लवण समुद्दो णदीसहस्सेहिं।
ण इमो जीवो सक्को तिप्पेउं कामभोगेहि ॥

जैसे तृण और लकड़ी से अग्नि तृप्त नहीं होती हजारों नदियों से लवण समुद्र पूर्ण नहीं होता, उसी तरह यह जीव काम-भोगों से तृप्त नहीं होता।

卐 सच्चं हि तवो सच्चम्मि संजमो तह य सेस या वि गुणा।
सच्चं णिबंधणं हि य गुणाणमुदधीव मच्छाणं ॥

सत्य ही तप है। सत्य में ही संयम है और शेष सभी गुण सन्निविष्ट हैं। जैसे समुद्र मछलियों का आश्रय-स्थल है, वैसे ही सत्य सभी गुणों का आश्रय स्थल है।

卐 जे य कंते पिए भोए, लद्धे विपिट्ठ कुव्वइ।
साहीणे चयइ भोए से हु चाइ त्ति वुच्चइ ॥

त्यागी वह कहलाता है जो सुंदर और प्रिय भोगों के उपलब्ध होने पर भी उनकी ओर से पीठ फेर लेता है और स्वाधीनतापूर्वक उनका त्याग करता है।

卐 जय करिसयस्स धण्णं वरिसेण समज्जिदं खलं प
डहदि पुलिंगं दित्तो तध कोहग्गी समणसारं।

जैसे खलिहान में रखा गया किसान का वर्ष भर का अनाज एक चिनगारी द्वारा जलकर राख हो जाता है, वैसे ही क्रोध द्वारा मनुष्य के सभी उत्कृष्ट गुण जल जाते हैं।

卐 न य वुग्गहियं कहं कहेज्जा, न य कुप्पे निहुइंदिए पसंते।
संजमधुव जो जुत्ते उवसंते अविहेउए जे स भिक्खू ॥

भिक्षु वह है जो कलह करने वाली कथा नहीं करता, जो किसी पर क्रोध नहीं करता, जो इन्द्रियों को वश में रखता है, जो मन से प्रशान्त तथा स्थिर रहता है, जो कष्ट के समय व्याकुल नहीं होता तथा उचित कर्तव्य के प्रति जो उपेक्षाभाव नहीं रखता।

卐 लोभे तणे णिज्जादो जणेदि पावमिदरत्थ किं वच्चं ।
रइद मुउडादिसंगस्स वि हु ण पावं अलोभस्स ।।

मूल्यवान वस्तु की तो बात ही क्या, एक तुच्छ तिनके के प्रति रहा हुआ ममत्व-मात्र भी पाप को जन्म देता है। जो ममत्व-रहित है, वह मुकुट आदि परिग्रह से युक्त होने पर भी पाप से स्पृष्ट नहीं होता।

卐 होदि य वस्सो अप्पच्चइदो तध अवमदो य सजणस्स ।
होदि अचिरेण सत्तू णियाणं णियडिदोसेणं ।।

जो व्यक्ति मायावी होता है, स्वजन भी उससे द्वेष करते है। वह उनके लिए अविश्वासनीय और अवहेलनीय होता है। अन्त में वह अपने बन्धु-जनों का शत्रु हो जाता है।

卐 णारतिं सहते वीरे, वीरे णो सहते रतिं ।
जम्हा अविमणे वीरे, तम्हा वीरे ण रज्जति ।।

वीर पुरुष उच्छृंखलता को सहन नहीं करता, परतंत्रता को भी सहन नहीं करता। वह अपने आप में प्रसन्न रहता है। इसलिए वह किसी भी प्रलोभन में नहीं फंसता।

卐 रायाइमलजुदाण णियअप्पारूवं ण दिस्सए किं वि ।
समलादरिसे रूवं ण दिस्सए जह तहा णेयं ।।

जैसे मलिन अपने दर्पण में अपना प्रतिबिम्ब स्पष्ट नहीं दिखाई देता, उसी प्रकार राग द्वेष, मोह आदि मैल से युक्त जीव को शुद्ध आत्मस्वरूप की अनुभूति नहीं होती।

卐 जीववहो अप्पवहो, जीवदया अप्पणो दया होइ ।
ता सव्वजीवहिंसा, परिचत्ता अत्तकामेहिं ।।

जीव का वध अपना ही वध है। जीव की दया अपनी ही दया है। अतः आत्म हितैषी पुरुषों ने सभी प्रकार की जीव हिंसा का परित्याग किया।

卐 तुंगं न मंदराओ आगासाओ विसालयं नत्थि ।
जह तह जयंति जाणसु, धम्ममहिंसासमं नत्थि ।।

जैसे जगत् में मेरु पर्वत से ऊंचा और आकाश से विशाल और कुछ नहीं, वैसे ही अहिंसा के समान कोई धर्म नहीं।

卐 अह पंचहिं ठाणेहिं जेहिं सिक्खा न लब्भई ।
थंभा कोहा पमाएणं रोगेणालस्सएणा वा ।।

अहंकार, क्रोध, प्रमाद, रोग और आलस्य इन पांचों के रहते हुए, शिक्षार्थी शिक्षा प्राप्त नहीं कर सकता।

卐 कुमग्गे जह ओस विंदुए थोवं चिट्ठइ लम्बमाणाए ।
एवं मणुयाण जीवियं, समयं गोयम ! मा पमायए ।।

जैसे हिलती हुई घास की नोक पर ओस की बूंद कुछ समय तक ही ठहर सकती है, इसी प्रकार संसार में जीवन भी कुछ समय तक ही ठहर सकता है, अतः गौतम ! क्षण भर के लिए भी प्रमाद मत करो ।

卐 बलं थाम च पेहाऐ, सद्धामारुग्गमप्पणो ।
खेतं कालं च विन्नाय, तहप्पाणं निजुंजए ।।

कोई भी कार्य करने से पहले छः बातों का ध्यान रखो शारीरिक, मनोबल, आत्मविश्वास, कार्य-क्षेत्र और कार्य का समय एवं परिस्थितियां ।

卐 धम्मो मंगलमुक्किट्ठं, अहिंसा संजमो तवो ।
देवा वि तं नमंसंति, जस्स धम्मे सया मणो ।

अहिंसा, संयम और तप ही धर्म है और धर्म ही उत्कृष्ट मंगल है । जिसका मन धर्म में स्थिर हो जाता है देवता भी उसे नमस्कार करते हैं ।

卐 चउहिं ठाणेहिं संते गुणे नासेज्जा-कोहेणं, पडिणिसेवेण, अकयण्णुयाए, मिच्छता भिणिवेसेणं ।

चार दुर्गुणों के कारण मनुष्य के सभी गुण नष्ट हो जाते हैं क्रोध, ईर्ष्या, अकृतज्ञता और मिथ्या आग्रह ।

卐 उवहेएणं बहिया य लोगं से सव्व लोगम्मि जे केइ विण्णू ।

जो व्यक्ति अन्य धर्मावलम्बियों के प्रति भी तटस्थ रहता है अन्य धर्मों की मान्यताओं से उद्विग्न नहीं होता, वही विद्वानों में श्रेष्ठ माना जाती है ।

卐 जे एगं नामे से बहुं नामे ।

जो अपने आप को झुका लेता है, उसके सामने सारी दु[illegible] ।

卐 पुरिसा ! अत्ताणमेव अभिणिगिज्झ एवं दुक्खा प[illegible]

मानव ! अपने आप पर स्वयं नियंत्रण करो ! अपने [illegible] नियंत्रण करने पर ही तू, दुखों से छुटकारा पा सकता है ।

卐 समियाए धम्मे आरिएहिं पवेइए ।

आर्य महापुरुषों ने सबसे समान व्यवहार को ही धर्म कहा हैं ।

卐 चत्तारि धम्मदारा — खंती, मुत्ती, अज्जवे, मद्दवे ।

धर्म मंदिर के चार द्वार हैं क्षमा, संतोष, सरल स्वभाव और नम्रता ।

卐 सारद सलिलं व सुद्ध हियया····विहग इव विप्पमुक्का····
वसुंधरा इव सव्व फासविसहा

मुनि जनों का मन शरद् ऋतु की नदी-सा पारदर्शी स्वच्छ निर्मल नीर, बंधनों से मुक्त पक्षी-सा सहज स्वच्छंद और पृथ्वी की तरह सम-भाव से सुख-दुखों को सहन करता धीर ।

तीर्थंकर-महावीर

पांच नाम	वीर, अतिवीर, महावीर, सन्मति, वर्द्धमान।
तीर्थंकर क्रम	चौवीसवें
जन्म स्थान	क्षत्रिय कुण्डग्राम
पितृ नाम	सिद्धार्थ
मातृ नाम	त्रिशला देवी, 'प्रियकारिणी'
जाति	क्षत्रिय
गोत्र	काश्यप
वंशनाम	नाथवंश, 'ज्ञातृवंश'
गर्भावतरण	आषाढ़ शुक्ला षष्ठी, शुक्रवार १७ जून ५९९ ई०पू०
गर्भवास	नौ मास, सात दिन, बारह घंटे
जन्म-तिथि	चैत्र शुक्ला त्रयोदशी, चन्द्रवार, २७ मार्च, ५९८ ई०पू०
वर्ण	स्वर्णाभ
चिह्न	सिंह
गृहस्थित रूप	अविवाहित (प्रसंग चला, परन्तु विवाह नहीं किया। श्वेताम्बर मतावलम्बी विवाहित मानते हैं)।
कुमार काल	२८ वर्ष, ७ माह, १२ दिन
दीक्षा-तिथि	मगसिर कृष्णा १०, सोमवार, २९ दिसम्बर ५६९ ई०पू०
तप	१२ वर्ष, ५ मास, १५ दिन
कैवल्य	वैशाख शुक्ल १०, रविवार २६ अप्रैल, ५५७ ई०पू०
देशनापूर्व मौन	६६ दिन
प्रथम देशना-तिथि	श्रावण कृष्णा प्रतिपदा, रविवार, १ जुलाई ५५७ ई०पू०
निर्वाण-तिथि	कार्तिक कृष्णा ३०, मंगलवार, १५ अक्टूबर ५२७ ई०पू०
निर्वाण-भूमि	पावा (मध्यमा पावा)
आयु	७२ वर्ष (७१-३-२७)

जन्म-समय ज्योतिर्ग्रह: नक्षत्र : उत्तरा फाल्गुनि

[पाँच मांगलिक तिथियाँ]

१- गर्भकाल संवत्सर :- आषाढ़ शु० ६ उत्तर-हस्ता, शुक्रवार १७ जून, ५९९ ई०पू०

२- जन्म सिद्धार्थी :- चैत्र शु० १३ उत्तर फा०, सोमवार २७ मार्च, ५९८ ई०पू०

३- दीक्षा सर्वधारी :- मंगसिर कृ० १० उत्तर हस्ता, सोमवार २९ दिसम्बर ५६९ ई०पू०

४- केवलज्ञान शार्वरी :- बैशाख शु० १० उत्तर हस्ता, रविवार २६ अप्रैल ५५७ ई०पू०

५- निर्वाण शुक्ल :- कार्तिक कृ० ३० स्वाति, मंगलवार १५ अक्टूबर ५२७ ई०पू०

(विक्रम पूर्व ४७० तथा शक पूर्व ६०५)

[जीवन काल निर्णय]

१- कुमार काल	२८ वर्ष	७ माह	१२ दिन
२- तप काल	१२ वर्ष	५ माह	१५ दिन
३- देशना काल	२९ वर्ष	५ माह	२
४- योग निरोध	——	——	२ ।
	७० वर्ष	६ माह	१९ दिन
५- गर्भ काल	——	९ माह	७ दिन, १२ घंटे
	७१ वर्ष	३ माह	२६ दिन, १२ घंटे

शाकाहार पर कुछ पौराणिक अभिमत

卐 मनुष्य स्वभावतः शाकाहारी जीव है। शरीर रचना-विज्ञान, महात्माओं की वाणी तथा स्वास्थ्य-विज्ञान इस बात को समीचीन बतलाते हैं।

卐 दूसरे के मांस से अपना मांस बढ़ाना सबसे अधिक नीच काम।

— महाभारत अनुशासन पर्व अध्याय ११६

卐 जो रत्त लगे कपड़े जामा होवे पलित।
जो रत्त पीवे मानुषा तिन क्यों निर्मलचित्त। — गुरुग्रंथ साहब

卐 दुनियां वालों पर तुम रहम करो क्योंकि खुदा ने तुम पर बड़ी मेहरबानी की है। — हदीस

ارحموا من في الارض ترحمكم الرحمن

卐 अल्लाह ताला को तुम्हारी कुर्बानियों के गोश्त और खून से कोई वास्ता नहीं केवल निजाम की जरूरत है। — कुरान शरीफ

لن ينال الله لحومها ولا دماؤها ولكن يناله التقوى

卐 मांस और शराब का सेवन मत करो। — न्यूटेस्टामेन्ट

卐 एक समय आयेगा जब दूसरों को दुःख देने वालों को पछताना पड़ेगा।
— टैनिसन

卐 "Thou Shalt not kill" किसी भी प्राणी की हिंसा मत करो।
— ईसाई मत की ५वी आज्ञा

卐 "सव्वेसिं जीवियं पियं नाइवाएज्ज कंचण"
संसार में सभी को जान प्यारी है कोई भी मरना नहीं चाहता अतः किसी भी प्राणी की हिंसा मत करो। — आचरांग सूत्र १, २, ३

卐 शराब पीना एक सामाजिक अपराध है! मांस का प्रचार करने वाले सबराक्षस हैं। — स्वामी दयानन्द

卐 "रक्त बहाना छोड़ दो, और अपने मुंह में मांस मत डालो। ईश्वर की आज्ञा है कि मनुष्य पृथ्वी से उत्पन्न होने वाले फल और अन्न से जीवन निर्वाह करे।" ईसामसीह . . . III-६१-१)

अहिंसा परमो धर्मः यतो धर्मस्ततो जयः।

—: शाकाहारी बनो :—

(भारत सरकार द्वारा प्रकाशित हैल्थ बुलेटिन न० २३)

क्योंकि अण्डे, मछली, मांस, की अपेक्षा शाकाहारी खाद्यों में अधिक पौष्टिक तत्व होते हैं।

—: शाकाहारी खाद्य :—

नाम पदार्थ	प्रोटीन %	चिकनाई %	खनिज लवण%	कार्बोहाइड्रेट्स%	कैलशियम%	फ़ासफोरस%	लोहा	कैलोरी 100 grs.
गेहूं का आटा	१२.१	१.७	१.८	७२.२	०.०४	०.३२	७.३	३५१
बाजरा	११.६	५.०	२.७	६७.१	०.०५	०.३५	८.८	३६०
ज्वार	१०.४	१.९	१.८	७४.०	०.०३	०:२८	६.२	३५५
जौ	११.५	१.३	१.५	६९.३	०.०३	०.२३	३.७	३५५
मकई	११.१	३.६	१.५	६६.२	०.०१	०.३३	२.१	३४२
चावल	८.५	०.६	०.९	७७ ४	० ०१	.२८	२.८	३४९
मुरमुरा	७.५	०.१	३.४	७४.३	०.०२	०.१६	६.२	३२८
मूंग	-	१.३	३.६	५६.६	०.१४	०.२८	८.४	३३४
उड़द		१.४	३.४	६०.३	०.२०	०.३७	९.८	३५०
अरहर		१.७	३.६	५७.२	०.१४	०.२६	८.८	३५३
मसूर		०.७	२.१	५९.७	०.१३	०.२५	२.९	३४६
मटर		१.४	२.३	६३.५	०.०३	०.३६	५.०	३५८
चना	२२.५	५.२	२.२	५८.९	०.०७	०.३१	८.९	३७२
लोभिया	२४.६	०.७	३.२	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]

पुदीना	४.८	०.६	१.६	०.८	०.२०	०.०८	१५.६	५७
सरसों का साग	५.१	०.४	३.५	७.१	०.३७	०.११	१२.५	५२
पालक	१.९	०.९	१.५	४.०	०.०६	०.०१	५.०	३२
करेला	२.९	०.१	१.४	९.८	०.०५	०.१४	९.४	६०
भिण्डी	२.२	०.२	०.७	७.७	०.०९	०.०८	१.५	४१
केरी (आम)	०.०५	०.१	०.४	८.८	०.०१	०.०२	४.५	३९
सिंघाड़ा	४.७	०.१	१.१	२३.९	०.०२	०.१५	०.८	११७
टमाटर	१.९	०.१	०.७	४.५	०.०२	०.०४	२.०	२७
बादाम	२०.८	५८.९	२.९	१०.५	०.२३	०.४९	३.५	६५५
काजू	२१.२	४६.९	२.४	२२.०	०.०५	०.४५	५.४	७९६
नारियल	४.५	४१.६	१.०	१३.०	०.०१	०.२४	१.७	४४४
तिल	१८.३	४३.३	५.२	२५.२	१.४४	०.५७	१०.५	५६४
मूंगफली	३१.५	३९.८	२.३	१९.३	०.०५	०.३९	१.६	५४९
खजूर	३.०	०.२	१.३	६७.३	०.०७	०.०८	१०.६	२८३
पनीर	२४.१	२५.१	४.२	६.३	०.७९	०.५२	२.१	३४८
खोया	१४.६	३१.२	३.१	२०.५	०.६५	०.४२	५.८	४२१
घी	—	९९.०	—	—	—	—	—	९००
— : मांसाहारी खाद्य :—								
अण्डा	१३.३	१३.३	१.०	०.००	०.०६	०.२२	२.१	१७३
मछली	२२.६	०.६	०.८	०.००	०.०२	०.१९	०.९	९१
बकरी का मांस	१८.५	१३.३	१.३	०.००	०.१५	०.१५	२.५	१९४
सुअर का मांस	१८.७	४.४	१.०	०.००	०.०३	०.२०	२.२	११४

'कलम' पर लोकमत

शशि जी की 'कलम' नामक पुस्तक देखने को मिली यह जानकर प्रसन्नता हुई कि एक साधारण वस्तु को उन्होंने विशेष महत्व दिया है। उसके लिए मेरी ओर से बहुत-बहुत बधाई।

रामजीलाल 'सहायक'
शिक्षा-मंत्री उत्तर प्रदेश

'कलम' मिली मैं इसमें आपकी निश्छल आत्मा को पढ़ सका हिन्दी में बड़े और सफल काव्य शिल्पियों की कमी नहीं पर उनकी कविता का उनके जीवन से कोई लेना देना नहीं. आप तो साधक हैं कविता के सौदागर नहीं, इसीलिए 'कलम' के प्रति मैं आदर व्यक्त करता हूँ।

वीरेन्द्र कुमार जैन
बम्बई

'कलम' मिली 'कलम' की इतनी गवेषणा पर आपका प्रयास सराहनीय है बधाई स्वीकार करें।

अक्षय कुमार जैन

'कलम' के धर्म, की कवि ने अपनी विलक्षण प्रतिभा और गहन चिन्तन से सत्य के विविध रूपों की अभिव्यक्ति की है जिस अछूते विषय को उन्होंने चुना है उसमें ऐतिहासिक और पौराणिक अनेकों तथ्यों का रहस्योद्घाटन हुआ है।

सन्मति संदेश

'कलम' एक लम्बी कविता है जिसमें कलम को स्वतंत्र रूप से लिखने को प्रेरित किया गया है कवि की विचार धारा सरलता सर-सता और लय से परिपूर्ण है।

नव भारत ————

'कलम' में गांधीवाद उजागर हुआ है उसे सुनने सम-आचरण का विषय बनाने वाले पाठकों के हृदय, 'कलम' से ·हुए बिना नहीं रह सकते।

—चौराहा

'कलम' में सौष्ठव और प्रौढ़ता है सभी सामग्री श्रेष्ठ और पाठनीय है।

राष्ट्रधर्म

इस काव्य साहित्य के मूल में शशि जी का कल्पनाशील आदर्श-वादी चिन्तन है।

सहकारी युग

प्राप्ति स्थान : -   पिन २४४९०१

आनन्द - संस्थान, रामपुर (उ० प्र०)

मूल्य : ३) रुपये

'खराद' पर लोकमत

'खराद' अखण्ड जीवन्त प्रखरता का प्रचण्ड स्वर में खण्ड काव्य है प्रौढ़ कवि की यह अद्भुत उत्साह प्रेरक रचना नव युवकों के लिये प्रेरणा का संजीवदान है हम ऐसे इस महान कवि को बधाई ही नहीं देते उसका अभिनन्दन भी करते भी हैं।

- अहिंसा वाणी

खराद' पढ़कर निसंकोच यह कहा जा सकता है कि शशि जी ने 'खराद' में गागर में सागर भरा है उन्होंने कबीर की भाँति वाह्याडम्बरों पर करारे व्यंग किये हैं।

स्वतंत्र आवाज 'दैनिक'

जिस काव्य में समाज सुधार की भावना न हो, मानव कल्याण के लिये कोई प्रेरणा न हो, युवा पीढ़ी के लिये कोई सन्देश न हो, उसे मैं कविता नहीं मानता सौभाग्य से खराद में मुझे भाव-गाम्भीर्य, सरल भाषा तथा प्रेरणा एवं तत्व मिले जिनसे मैं अभिभूत हो गया।

- डॉ० बनारसी लाल चतुर्वेदी

खराद' को देखकर ऐसा लगा कि मानो प्रत्येक मुक्तक 'खराद' पर चढ़ाकर उतारा गया मूल्यवान नग हो मन करता है इसे अंगूठी में जड़वाकर पहिने रहें यह हिन्दी का सौभाग्य है कि आपने राष्ट्र भाषा को इतनी महत्त्व की पुस्तक दी।

निरंकार देव 'सेवक'

रवीन्द्र नाथ ने अपने अन्तिम गीत में 'मरण' को मंगलमय मानते हुये स्वर्गिक आल्हाद का संचार करके भारतीय संस्कारिता की रक्षा की है शशि जी 'मरण' को अंधकार पक्ष का भागीदार नहीं बनने देना चाहते उन्होंने लिखा है

मृत्यु असमर्थता के पात्रों को नया प्राण देती है।

यह कहने के लिये सुदृढ़ दार्शनिक पूर्व पीठिका अनिवार्य है 'खराद' में शशि जी उसी आसन में बोले हैं।

— सोम ठाकुर

प्राप्ति स्थान :—　　　　पिन २४४९०१

आनन्द - संस्थान, रामपुर (उ० प्र०)

मूल्य : ३) रुपये

आनन्द-संस्थान का अगला पुष्प-

जैन पुरातत्व-स्मारिका

(पुरातत्व में रुचि रखने वालों के लिये एक अमूल्य कृति)

खण्ड-क- जैन पुरातत्व

खण्ड-ख- जैन साहित्य एवं इतिहास

खण्ड-ग- जैन संस्कृति व दर्शन

चित्रों एवं कलापूर्ण शोध लेखों के साथ सुसज्जित

(शीघ्र प्रकाशित योजना के चरणों में)

सम्पादित :

डा० नी० पु० जोशी

निदेशक

राज्य संग्रहालय, लखनऊ (उ०प्र०)

प्रकाशक :

रमेश कुमार जैन

सचिव :

आनन्द-संस्थान

आनन्द कुमार जैन मार्ग रामपुर (उ०प्र०)

पिन-२४४६०१